मासिक

अरफ़ात किरण

रायबरेली

चिन्ता की बात

''इन्सानों की एक बड़ी जमाअत का किसी ग़लत रास्ते पर पड़ जाना अपने सिफ़ली ख़्वाहिशात और पस्त दर्जे के मक़ासिद की तकमील के पीछे दीवाना हो जाना, तारीखें इन्सानी के लिये भी और तक़दीरे इन्सानी के लिये भी शदीद तश्वीश की बात नहीं है। तश्वीश की बात यह है कि बिगड़े हुए हालात से पंजा आज़माई करने, फ़साद व इन्तिशार पैदा करने वाली ताक़तों से आंख मिलाने वाले अपनी सहूलतों, इज़्ज़तों और कभी–कभी हुकूमत व इक़्तिदार को ख़तरे में डालकर मैदान में उतरने वाले नायाब हो जायें। अस्ल चिंता की बात यह है।''

हज़रत मौलाना सैय्यद अबुल हसन अली हसनी नदवी (रह0)



APR 18

₹10/-

मर्कज़ुल इमाम अबिल हसन अल नदवी
दारे अरफ़ात, तकिया कलां, रायबरेली

शौक़-ए-आख़िरत

मौत हर मुसलमान के लिये कफ़्फ़ारा है

"हज़रत अब्दुल्लाह बिन उमर (रज़ि०) से रिवायत है कि रसूलुल्लाह (स०अ०) ने फ़रमाया कि मुसलमान का सबसे चहीता तोहफ़ा मौत है।"

जो बिछड़े हुए गुलाम को उसके शफ़ीक़ व करीम (स्नेही व कृपालु) मालिक से मिला दे, उससे बढ़कर चहीता तोहफ़ा उसके लिये और क्या हो सकता है? कोई उस पुल से भी भला रूठा और बिगड़ा जो सीधा महबूब के दर तक पहुंचा दे? मुसलमान के लिये तो वह घड़ी हक़ीक़त में बहुत ज़्यादा ख़ुशी की होती है।

"हज़रत अनस (रज़ि०) से रिवायत है कि रसूलुल्लाह (स०अ०) ने फ़रमाया कि मौत हर मुसलमान (के गुनाहों का) कफ़्फ़ारा है।" (कि उसकी तकलीफ़ ही से गुनाह माफ़ हो जाते हैं)

और ऐसी दवा में अगर कुछ कड़वाहट भी हो, जो बीमारी की तकलीफ़ों को ख़त्म कर देने वाली हैं तो कौन ऐसा है जो उस दवा से नाख़ुश होगा और शब्दों से ख़ुशनुमा बात न करेगा। "हज़रत अब्दुल्लाह बिन अम्र बिन आस(रज़ि०) से रिवायत है कि रसूलुल्लाह (स०अ०) ने फ़रमाया कि दुनिया मोमिन का जेलख़ाना और क़ैद की जगह है (कि वहां राहत और नेमत दोनों कम हैं) तो जब वह दुनिया को छोड़ता है तो जेलख़ाना और क़ैद की जगह को छोड़ता है, क्योंकि आख़िरत में राहत और नेमत दोनों कामिल हैं।"

क़ैदख़ाना उसको कहते हैं कि राहत और ख़ुशी सीमित, आज़ादी बिल्कुल ही सीमित हो। दुनिया में एक तो राहतें और नेमतें यूं भी बहुत कम और फिर उनके ख़र्च व इस्तेमाल में भी शरीअत की तरफ़ से तरह—तरह की क़ैदें और पाबन्दियां लगी हुईं। मरते ही आख़िरत की असीमित नेमतों के इस्तेमाल की असीमित आज़ादी मिल जाती है। फिर अगर उसके मुक़ाबले में इस दुनिया को जेलख़ाने का नाम न दिया जाये तो क्या कहा जाये? मौत का वक़्त तो उस क़ैदे से छूटने और आज़ादी पाने का होता है न कि किसी और क़ैद में गिरफ़्तार होने का।

"हज़रत अनस (रज़ि०) से रिवायत है कि रसूलुल्लाह (स०अ०) ने फ़रमाया कि मौत हर मुसलमान के लिये कफ़्फ़ारा है।'' और कफ़्फ़ारे के माने यह हैं कि उसकी तकलीफ़ से गुनाह माफ़ हो जाते हैं और बरज़ख़ व हश्र (परलोक) में उनकी पकड़ व गिरफ़्त का ख़तरा नहीं रह जाता— यह गुनाह जितनी मात्रा में भी माफ़ हो जायें तो वही नेमत क्या कम हैं, लेकिन बाज़ शारहीन (शरीअत की व्याख्या करने वाले) का कथन है कि कुल माफ़ हो जाते हैं। जब तो फिर ऐसी नेमत का पूछना ही क्या?

"हज़रत अबू मालिक अश्अरी (रज़ि०) से रिवायत है कि रसूलुल्लाह (स०अ०) नु दुआ फ़रमायी है कि इलाही! जो कोई मेरे रसूल होने का विश्वास रखता है, मौत उसके लिये महबूब बना दीजिए।"

लीजिए अब और क्या चाहिये? यह तो साफ़ दुआ रसूलुल्लाह (स०अ०) की अपने रब से है। फिर मौत से डर और परेशानी कैसी? इसे तो मेरी उम्मत में हर एक के हक़ में प्रिय व महबूब बना दीजिए।"

यह तो रसूलुल्लाह (स०अ०) ने अपने परवरदिगार से मांगा और अपनी उम्मत से क्या कहा उसे भी सुन लीजिए:

"हज़रत अनस (रज़ि०) से रिवायत है कि रसूलुल्लाह (स०अ०) ने मुझसे फ़रमाया कि अगर मेरी नसीहत याद रखो तो मौत से बढ़कर कोई चीज़ तुम्हें महबूब न होना चाहिये।" यह बात भी आपने सुन ली! मौत मोमिन को महबूब क्या, बहुत ज़्यादा महबूब होनी चाहिये!"

मौलाना अब्दुल माजिद दरियाबादी (रह०)

بسم الله الرحمن الرحيم

मासिक

अरफ़ात किरण

रायबरेली

अंक: ४ | अप्रैल २०१८ ई० | वर्ष: १०

संरक्षक

हज़रत मौलाना
सैय्यद मुहम्मद राबे हसनी नदवी
(अध्यक्ष – दारे अरफ़ात)

निरीक्षक

मौ० वाज़ेह रशीद हसनी नदवी
जनरल सेकेरेट्री– दारे अरफ़ात

सम्पादक

बिलाल अब्दुल हयि हसनी नदवी

सम्पादकीय मण्डल

मुफ़्ती राशिद हुसैन नदवी
अब्दुस्सुबहान नारवुदा नदवी
महमूद हसन हसनी नदवी

सह सम्पादक

मो० नफ़ीस ख़ॉ नदवी

अनुवादक

मोहम्मद सैफ़

मुद्रक

मो० हसन नदवी

इस अंक में:

रक्त रंजित सीरिया.....२
बिलाल अब्दुल हयि हसनी नदवी

मानवता की दावत.....३
हज़रत मौलाना सैय्यद मुहम्मद राबे हसनी नदवी

सत्यता का स्तर.....५
मौलाना अब्दुल्लाह हसनी नदवी रह०

एकेश्वरवाद क्या है?.....७
बिलाल अब्दुल हयि हसनी नदवी

मैय्यत को कफ़न दिलाने का शरई हुक्म.....१०
मुफ़्ती राशिद हुसैन नदवी

आख़िरत पर ईमान.....१२
अब्दुस्सुब्हान नाख़ुदा नदवी

मीडिया का गिरता स्तर लोकतन्त्र के लिये ख़तरा.....१३
जनाब मुहम्मद अब्बास

सीरिया का गृहयुद्ध एक विश्लेषण.....१५
मौलाना नदीमुल वाजिदी साहब

उम्मीद–ए–इलाही.....१८
मुहम्मद अरमुग़ान बदायूंनी नदवी

इस्लाम पश्चिमी देशों में बढ़ती प्रसिद्धी.....१९
मुहम्मद नफ़ीस ख़ाँ नदवी

E-Mail: markazulimam@gmail.com

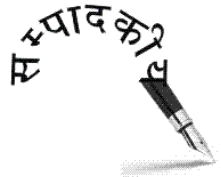
www.abulhasanalinadwi.org

मर्कज़ुल इमाम अबिल हसन अल–नदवी दारे अरफ़ात, तकिया कलां रायबरेली,यू०पी०.229001

प्रति अंक 10रू

मो० हसन नदवी ने एस० ए० आफसेट प्रिन्टर्स, मस्जिद के पीछे, फाटक अब्दुल्ला खॉ, सब्ज़ी मण्डी, स्टेशन रोड रायबरेली से छपवाकर आफिस अरफ़ात किरण,मर्कज़ुल इमाम अबिल हसन अल–नदवी, दारे अरफ़ात, तकिया कलां रायबरेली से प्रकाशित किया।

वार्षिक 100रू०



रक्त रंजित सीरिया

बिलाल अब्दुल हयि हसनी नदवी

नबियों व संदेष्टाओं की धरती सीरिया इस समय रंक्त रंजित है। इस पवित्र धरती को अल्लाह तआला ने बरकत वाला बनाया था और उसके बारे में "हमने उसके आस–पास को बरकत वाला बनाया" की गवाही दी थी, आज वह दुनिया की दो बड़ी ताक़तों का मैदाने जंग बना हुआ है। दुनिया देख रही है कि मरने वाले तथा मारने वाले मुसलमान हैं, लेकिन वास्तविकता कुछ और है। इसमें कोई संदेह नहीं कि मरने वाले तो मुसलमान ही हैं। लेकिन पर्दे के पीछे क्या हो रहा है, इसको शायद कम लोग जानते होंगे।

मध्य एशिया में इस समय सीरिया ही वह एकमात्र देश है जो रूसी गठजोड़ का है। अमरीका की शुरू से इस पर नज़रें हैं। इस्लाम के नाम पर क्रान्ति की जो हवा चली वह शायद किसी भी देश को रास न आ सकी। सीरिया भी उसकी चपेट में आया। हाफ़िज़ अल असद जैसे मुलहिद व कम्यूनिस्ट शासकों ने पहले ही उसको तबाह कर दिया था। बड़े–बडे इस्लामिक बुद्धिजीवी (उलमा) देश छोड़ने पर मजबूर हुए। हज़ारों लोग शहीद हुए। धीरे–धीरे थोड़ी शांति बहाल हुई। बश्शार ने नर्म पॉलिसी अपनायी और बहुत से दूरदर्शी बुद्धिजीवियों (उलमा) ने उससे संबंध जोड़े। उसके हृदय परिवर्तन का प्रयास किया तथा देश का रुख़ बज़ाहिर एक बेहतर तब्दीली की तरफ़ हो गया। लेकिन बातिल (अनृत्य) ताक़तों को मुसलमानों का सुकून कब पसंद है? इस्लाम के नाम पर ही कुछ लोगों को खड़ा किया गया। वे बेचारे ईमानी भाव के साथ आगे बढ़े। अमरीका ने अपना हित साधने के लिये पीछे से उनकी मदद भी की, मगर दूसरी ओर बश्शार के लिये रूस खड़ा हो गया। ईरान ने भी पूरा साथ दिया। इस तरह यह जंग रूस व अमरीका की बन गयी और सीरिया को रणभूमि बना दिया गया। और फिर वह सबकुछ हुआ कि सुनकर रोंगटे खड़े हो जायें। कलेजा मुंह को आ जाये। इन्सानों ने सारी पार कर डालीं। कुछ लोग चीख़े–चिल्लाये। कुछ ने मातम किया। लेख भी लिखे गये। सोशल मीडिया का भी ख़ूब इस्तेमाल हुआ। लेकिन अभी तक हालात में कोई बड़ा बदलाव न आ सका। उसका आधारभूत कारण दोनों ताक़तों का टकराव है तथा दोनों इस पर संतुष्ट हैं कि नुक़सान मुसलमानों का हो रहा है। हम मुसलमानों को सोचने की आवश्यकता है। एक ओर दुआओं का हर संभव प्रयास तथा दूसरी ओर कारणों पर सोच–विचार। इस प्रकार के हालात क्यों पैदा होते हैं?हमसे ग़लती कहां हो रही है। निसंदेह अल्लाह तआला की कुदरत सबसे बढ़कर है। क्षणभर में कुछ से कुछ हो सकता है। लेकिन ऐसा क्यों नहीं हो रहा है?पानी कहां मर रहा है इस पर विचार किया जाये।

दुनिया के इस माहौल में जबकि "कुफ़्र एक संयुक्त शक्ति" के रूप में हमारा सामना करने के लिये हर समय तैयार है, हमें इसके लिये बड़ी ईमानी ताक़त की ज़रूरत है। आपस की एकता व प्रेम की आवश्यकता है। अकारण टकराव की पॉलिसी पर फिर से विचार करने की अत्यधिक आवश्यकता है। मुहब्बत ने दुनिया फ़तेह की है। मुसलमान अगर इसी प्रेम व आपसी भाईचारे के साथ इस्लाम के संदेश को आम जन तक पहुंचाएं तथा दिलों तक पहुंचने का प्रयास करें तो हालात निसंदेह बदल सकते हैं। इतिहास में इसकी बहुत सी मिसालें मौजूद हैं और ज़िन्दा क़ौमें हमेशा इतिहास से सबक़ लेती हैं।

मानवता की दावत

हज़रत मौलाना सैय्यद मुहम्मद राबे हसनी नदवी

इतिहास बताता है कि हमारा देश विभिन्न जातियों, नस्लों तथा विभिन्न प्रकार के धर्मों का देश रहा है। यह कोई नयी बात नहीं है। बल्कि पहले से यह बात चली आ रही है कि इस देश में विभिन्न प्रकार के मनुष्य रहते हैं तथा प्रेम व भाईचारे के साथ रहते हैं। मैंने जो देखा है और जो अनुभव किया है कि यहां आपसी मुलाक़ातों व मामलों में कोई भेदभाव नहीं किया जाता था तथा एक–दूसरे के साथ हमदर्दी की जाती थी। यदि सड़क पर कोई व्यक्ति चलते–चलते गिर जाता था तो उसको तुरन्त उठाते थे। यह ज़रूरी नहीं था कि उठाने वाला उसका संबंधी या भाई हो। उठाने वाला कोई दूसरा भी हो सकता था। लेकिन वह तुरन्त उसे उठाएगा और कहेगा; चोट तो नहीं लगी? मैं अपने अनुभव से यह बात कह रहा हूं कि इस देश में यह सुहानूभूति रही है। और बात यह है कि यह हमदर्दी जब तक बनी रहेगी उस समय तक यह देश उन्नति करेगा और देश बेहतर रहेगा। एक घर के अन्दर अगर भाई–भाई से लड़ने लगे तो घर बर्बाद हो जाता है। उसमें किसी को फ़ायदा नहीं पहुंचता है। दोनों ही नुक़सान उठाते हैं। इसीलिए हममें से हर व्यक्ति को एक साथ रहने का ढंग सीखना पड़ता है।

मनुष्य अपने विचार व अपनी सोच के अनुसार एक दूसरे से अलग होता है तथा यह ज़रूरी नहीं कि हमारी सोच हमारे भाई की सोच की तरह हो या हमारे बाप की सोच की तरह हो या हमारी मां की सोच की तरह हो। हर एक की सोच अलग हो सकती है। उनकी सोच अलग हो सकती है और हमारी अलग। लेकिन सोच–सोच से लड़ेगी नहीं। इसलिए कि यह ख़्याल होगा कि हम एक साथ रहते हैं। हम एक–दूसरे से इन्सान की हैसियत से जुड़े हुए हैं। हम सब इन्सान हैं। यह नहीं कि हममें से कोई जानवर है, कोई शैतान है। बल्कि हम सब इन्सान हैं, लिहाज़ा हमारी सोच अलग–अलग हो सकती है। इसलिए हम एक–दूसरे से मिलकर आपस में समझौते के साथ ज़िन्दगी गुज़ारना चाहिये और जब हमें ज़रूरत पड़ती है तो हम ऐसा करते हैं लेकिन जो लोग राजनीति को ज़रिया बनाते हैं, वे माहौल को बिगाड़ने की कोशिश करते हैं और सोच को सोच से लड़ाते हैं। तथा इसके कारण आपस में टकराव पैदा होता है। एक दूसरे का विरोध पैदा होता है। जबकि सोच को सोच से टकराना नहीं चाहिये। बल्कि इसका फ़ायदा उठाना चाहिये कि उनकी सोच हो सकता है कि ज़्यादा अच्छी हो और संभव है कि हमारी सोच कम अच्छी हो।

आम तौर पर व्यक्तिगत जीवन में आवश्यकता पड़ने पर हम आपस में मुहब्बत और एक दूसरे के सहयोग से जीवन व्यतीत करते हैं। हम यह सोचते हैं कि हम सब एक हैं। हम बाज़ार में चीज़ों का ख़रीदना बेचना तो एक साथ करते हैं। अगर हम बीमार होते हैं तो डॉक्टर के पास जाते हैं। और डॉक्टर किसी दूसरे धर्म का होता है और मरीज़ किसी दूसरे धर्म का, लेकिन दोनों एक दूसरे से हमदर्दी करते हैं। डॉक्टर उसका इलाज करता है, वह यह नहीं देखता है कि हमारा मरीज़ हमारे मज़हब का है या नहीं है। इसी तरह जब हम बाज़ार में सौदा लेने जाते हैं तो सौदा बेचने वाला व्यक्ति यह नहीं देखता कि हमसे सौदा लेने वाला व्यक्ति किस धर्म का है। बस वह यह देखता है कि इन्सान है। अर्थात हम मनुष्य होने की बुनियाद पर जीवन गुज़ार रहे हैं और यह दुनिया इसी बुनियाद पर चल रही है। अगर इन्सान–इन्सान से लड़ने लगे तो यह सारी दुनिया ख़त्म हो जाये और यह जो हम देखते हैं कि देशों में आपस में टकराव होता है वह इसी वजह से होता है कि वे इस बात को नहीं समझते कि सामने वाले भी इन्सान हैं। वे भी इन्सान हैं। ये भी इन्सान हैं। अगर इन्सानों की तरह ज़िन्दगी गुज़ारें तो हमें कोई परेशानी नहीं होगी। अगर हम इन्सानों की तरह ज़िन्दगी गुज़ारें तो एक–दूसरे को नुक़सान पहुंचेगा और इसमें जीतने वाला भी जीतता नहीं है। जितनी लड़ाई होती है उसमें दोनों को नुक़सान होता है। जीतने वाला भी नुक़सान उठाता है और हारने वाला भी नुक़सान उठाता है। बस अन्तर यह है कि लोग कहते हैं कि हार गया और जीत

गया। लेकिन नुक़सान दोनों को होता है।

इसलिए ज़िन्दगी की मांग यह है कि हम एक दूसरे को अपना समझें। एक दूसरे को पड़ोसी समझें और पड़ोसी के बारे में जहां तक हमारा अध्ययन है, हमारे इस्लाम में पड़ोसी के बारे में बहुत ज़्यादा शिक्षा दी गयी है कि पड़ोसियों के साथ अच्छा सुलूक करो। पड़ोसी के साथ हमदर्दी करो। पड़ोसी को अपना भाई समझो। लेकिन हम इस बात को भूल जाते हैं। हम छोटी से छोटी बात पर दूसरे से लड़ने लगते हैं। छोटी से छोटी बात पर हम दूसरे के ख़िलाफ़ खड़े हो जाते हैं। ज़ाहिर है कि इसमें ख़ुद हमारा नुक़सान होता है। जब हम एक एक बात पर एक–दूसरे से उलझेंगे और लड़ेंगे और मतभेद करेंगे तो अपना ही नुक़सान करेंगे। अगर हर व्यक्ति यह करने लगे कि हम सौदा उसी व्यक्ति को बेचेंगे जो हमारे घर का आदमी हो। हम उसी मरीज़ को देखेंगे जो हमारे घर का मरीज़ हो। तो ज़ाहिर है कि ज़िन्दगी कैसे चलेगी। इस तरह यह दुनिया नहीं चल सकेगी। दुनिया की व्यवस्था इन्सानियत की बुनियाद पर चलती है। जो लोग अस्पताल में एक दूसरे कि हमदर्दी करते हैं वे यह नहीं देखते कि सामने वाला कौन है। इसी तरह जब हम बाज़ार जाते हैं और सौदा ख़रीदते हैं तब हम सौदा देखते हैं कि सौदा कहां से मिलेगा। यह नहीं देखते कि किस से सौदा ले रहे हैं और अगर हममें यह बात पैदा हो जायेगी कि हम यह देखने लगें कि हम सौदा किससे ले रहें हैं और किसको बेच रहे हैं और मरीज़ कौन है और इसका हम इलाज करें या नहीं। तो यह बात सबके लिये परेशानी का कारण होगी इसलिए फिर न इलाज हो सकेगा, न ख़रीद–फ़रोख़्त हो सकेगी, न एक–दूसरे को फ़ायदा पहुंच सकेगा, बल्कि सब एक–दूसरे के सामने तने खड़े रहेंगे।

हमें इस बात को समझना चाहिये कि यह देश विभिन्न धर्मों, विभिन्न जातियों, विभिन्न प्रकार की विचारधाराओं का देश है। केवल एक धर्म, एक विचारधारा तथा किसी वर्ग विशेष का नहीं है। एक व्यक्ति की विचारधारा दूसरे की विचारधारा से अलग हो सकती है। जैसे भाई की सोच भाई से अलग होती है। लिहाज़ा अगर हम लोग उस विचारधारा के ऊपर लड़ने लगें कि हम तो यह देखते हैं, तुम भी यही समझो। तुम जो समझ रहे हो वह ग़लत है। हम जो समझ रहें हैं वह सही है। तो हम सब आपस में लड़ जायेंगे और दोनों का नुक़सान होगा। इसलिए हमें सुहानुभूति व आपसी सौहार्द के साथ काम करना चाहिये और बेहतर तरीक़ा यही है कि हम एक–दूसरे को समझने की कोशिश करें। पहले हम बात को समझें। सिर्फ़ एक ऐलान करने पर न लड़ जाएं।

लखनऊ की घटना है कि हमने देखा कि सूरज डूबने के बाद एकदम से लोग भागे चले जा रहे हैं और कुछ लोग डर के मारे हमारे घर में छुप गये हैं। हमने पूछा क्या हो गया? तो बताया कि लोग भाग रहे हैं। कुछ हो गया है। यह नहीं मालूम है कि क्या हुआ है। बाद में पता चला कि एक गाय भागी थी और उससे बचने के लिये कुछ लोग भागे थे और फिर उनको देखकर दूसरे लोग भी भागे और इस तरह एक शोर मच गया।

अगर हम इस तरह ज़रा–ज़रा सी बात पर असर यह लेगें कि ख़तरा है तो क्या होगा? बुद्धिमत्ता की बात यह है कि अगर कोई ख़तरा है तो उस ख़तरे को दूर करने की चिन्ता करनी चाहिये। उस ख़तरे को हल करना चाहिये। ख़तरे को छोड़ना नहीं चाहिये। इसी तरह अगर हमारे आपस में टकराव होता है तो हम एक–दूसरे से मिलकर इस टकराव को दूर करें। एक दूसरे की बात को समझने की कोशिश करें। हम इस बात को अख़्तियार करें कि एक दूसरे के साथ हमारा मामला हमदर्दी का होना चाहिये। सुलह–समझौता होना चाहिये। एक दूसरे को समझने की शक्ति होनी चाहिये। मौलाना पारिख साहब कहते हैं कि हमें अपनी दीवारें छोटी बनानी चाहिये ताकि हम एक–दूसरे को समझ सकें कि क्या हो रहा है। लेकिन अगर हम दीवारें ऊंची बनाएंगे तो एक दूसरे के बारे में ग़लतफ़हमी पैदा होगी और मामला कुछ से कुछ हो जायेगा। जब हम एक साथ इस देश में रह रहे हैं तो हमें रहने का तरीक़ा सीखना चाहिये। इस देश में अलग–अलग लड़ने का तरीक़ा नहीं चलेगा। हमें यहां रहना है और एकसाथ रहना है। इलाज व उपचार में और अस्पतालों में साथ रहना और बरसों साथ रहना है तो फिर हम एक दूसरे से लड़ेंगे, ...शेष पेज 9 पर

सत्यता का स्तर

मौलाना अब्दुल्लाह हसनी नदवी रह०

सच्चाई का शब्द उस व्यक्ति पर लागू होगा जो हर हाल में घटना के मुताबिक़ ही बात कहता हो और उसी बात पर अमल करता हो। यानि अगर कोई अल्लाह की वही (ईशवाणी) के मुताबिक़ ज़िन्दगी गुज़ारता है तो वह उसी क़द्र सच्चा है। उसी तरह जो शख़्स दुनिया के मामलों में हक़ीक़त के मुताबिक़ जितना कहने सुनने और करने वाला होगा उतना ही वह सच्चा होगा। जैसा कि रसूलुल्लाह (स0अ0) को मक्का वाले शुरू ही से सादिक़ (सत्यवान) कहते थे। क्योंकि रसूलुल्लाह (स0अ0) जो भी कहते थे आप वही करते भी थे। यानि जो आपका अमल था वही आपका कथन भी था और जो आपका कथन था वही आपका अमल भी था। और जो आपका अमल था वही कथन था। अर्थात तीनों में समानता थी कि उनके यहां भी कथनी–करनी में अन्तर नहीं पाया जाता था। इसलिए इस बात पर सबकी सहमति है कि वह दौरे सच्चाई का दौर था। अर्थात जो बात उनके दिल के अन्दर होती थी वही बाहर भी होती थी। ऐसा नहीं था कि दिल में ईर्ष्या हो और ज़बान पर मीठी बोली ज़ाहिर की जाये। यहां तक कि ज़माना जाहिलियत में भी अरबों का यह मिज़ाज नहीं था कि वह झूठ बोलें। क्योंकि वे सत्यप्रिय लोग थे लेकिन इसके विपरीत झूठ बोलने का अजमियों (ग़ैर अरब) का आम स्वभाव है। क्योंकि हमारे यहां यह हाल है कि यहां सच बोलने वाले नहीं है। बल्कि अक्सर झूठ ही बोलने वाले हैं। यही वहज है कि आज हर आदमी दूसरे आदमी को झूठा समझता है और उस पर शक करता है कि वह सच्चा है या झूठा। और यह आज का ऐसा मर्ज़ है कि जिसमें अच्छे–अच्छे गिरफ़्तार हैं। यहां तक कि जो लोग देखने में बड़े दीनदार मालूम होते हैं उनका भी जब हाल मालूम किया जाये तो यह मालूम होता है कि वह लोग भी इस बीमारी से ख़ाली नहीं है।

हक़ीक़त में ईमान और सच्चाई एक दूसरे की पूरक है। जिसकी दलील यह है कि अगर कोई दूसरे मज़हब का शख़्स भी सच्चा दिल और सच्ची नियत वाला हो और उसके बाद वह सही तौर पर ईमान की सच्चाई से परिचित हो जाये तो ज़रूर इस्लाम में दाख़िल हो जाता है। क्योंकि रोशनी की रोशनी से कभी लड़ाई नहीं होती। यानि अगर कहीं एक बल्ब लगा हो और दूसरा भी लगा दिया जाए तो और रोशनी फैलेगी न कि ख़त्म हो जायेगी। लेकिन अगर कमरे में अंधेरा है और वहां बल्ब लगा दिया जाये तो अंधेरा दूर हो जायेगा। मालूम हुआ कि रोशनी की रोशनी से लड़ाई नहीं हो सकती है। बल्कि रोशनी की अंधेरे से, ज़ुल्म की इन्साफ़ से लड़ाई होती है। इन्साफ़ की लड़ाई इन्साफ़ से नहीं होती, क्योंकि इसमें दोस्ती है। लड़ाई तब ही होती है, जब आपस में टकराव होता है। इसीलिए अगर कोई सच्चा दिल, सच्ची ज़बान लेकर आये, फिर इस्लाम का सच देख ले, तो फ़ौरन सहमत हो जाता है। एक हदीस में नबी करीम (स0अ0) का इरशाद है: "तुम पर सच्चाई लाज़िम है, और सच्चाई नेकी की तरफ़ हिदायत करती है, और नेकी जन्नत की तरफ़ ले जाती है।" आदमी बराबर सच बोलता रहता है और सच्चाई को ही अपना लेता है तो वह मक़ाम–ए–सिद्दीक़ियत को पहुंच जाता है और अल्लाह तआला के यहां सिद्दीक़ (सच्चा) लिख जाता है और झूठ से बचना अनिवार्य है। क्योंकि झूठ बोलने की आदत आदमी को बुरे कामों की राह पर डाल देती है और बुरे काम उसको दोज़ख़ तक पहुंचा देती है और आदमी झूठ बोलने का आदी होता है और झूठ को अपना लेता है तो अंजाम यह होता है कि वह अल्लाह के यहां कज़्ज़ाब (झूठा) लिख दिया जाता है।

हदीस में कहा गया: सच्चाई नेकी की तरफ़ रहनुमाई करती है। फिर सच्चाई और नेकी दोनों ही आदमी को जन्नत में ले जाती है लेकिन अगर कोई शख़्स झूठ बोलता है तो उसका वह झूठ इन्सान को गुमराही की तरफ़ ले जाता है। इसलिए कि सच्चा आदमी जो भी कहता है, एक बार में कह देता है और उम्र भर उसका वही कथन रहता है और झूठा आदमी अपने झूठ को छिपाने के लिये हर वक़्त अपने कथन को बदल–बदल कर पेश करता है जिसका नतीजा यह होता है कि वह हर वक़्त एक उलझन में गिरफ़्तार रहता है और झूठ बोलते–बोलते जहन्नम रसीद कर दिया जाता है। इसी तरह ऊपर दी गयी हदीस में कहा गया कि इन्सान को सच बोलने की आदत डालते रहना चाहिये। यानि इन्सान को हर उस चीज़ से बचना चाहिये जो आदमी को मुबालग़ा (अतिश्योक्ति) और बेजा तारीफ़ पर आमादा करे। क्योंकि यह सब झूठ की क़िस्में हैं।

एक दूसरी हदीस में नबी करीम (स0अ0) ने झूठ की सबसे बुरी किस्म बयान करते हुए कहा: सबसे बुरा झूठ यह है कि आदमी ने जिस चीज़ को देखा न हो, उसके बारे में

कहे कि मैंने उसको देखा है। इस हदीस से यह समझा जा सकता है कि झूठा ख़्वाब बयान करना झूठ ही में शामिल है। लेकिन यह बीमारी इस ज़माने में बहुत कसरत से बाज़ ज़ाहिरी बुर्जुगाने दीन में आ गया है, जोकि अपनी बुजुर्गी बताने के लिये झूठे ख़्वाबों को ज़रूर बयान करते हैं। इसीलिए जो लोग ज़्यादातर ख़्वाब देखते हैं वह अक्सर पक्के झूठे होते हैं। इल्ला माशा अल्लाह यानि बहुत कम लोग ऐसे हैं जो सही माने में ख़्वाब देखते हों। वर्ना अक्सर ख़्वाब तो झूठे ही रहते हैं। हज़रत मौलाना मुहम्मद अमीन शाह नसीराबादी फ़रमाते थे अगर कोई शख़्स यह कहे कि मैंने ख़्वाब में रसूलुल्लाह (स0अ0) को देखा है, लेकिन वह सुन्नत की पैरवी करने वाला न हो तो यह समझा जा सकता है कि वह पक्का झूठा है। लेकिन आजकल हर कोई बताता है कि उसने नबी करीम (स0अ0) की ख़्वाब में ज़ियारत की है। यहां तक कि बाज़ के झूठ बोलने की हद इस क़द्र बढ़ चुकी है कि आंख़ बन्द होते ही वह ख़्वाब में रसूलुल्लाह (स0अ0) की ज़ियारत कर लेते हैं।

ख़्वाब की दो क़िस्में होती हैं। एक ख़्वाब वह है जो इन्सान सोने की हालत में सच्चा ख़्वाब देखता है और एक ख़्वाब वह है जो आजकल रायज है। यानि इन्सान आंखें बन्द करता है और सोचने लगता है कि मैं कितना बड़ा बुजुर्ग हूं। बड़ी तादाद में लोग मेरे आगे–पीछे चल रहे हैं। मैं अमामा बांधे हुए मसनद पर बैठा हूं और लोग मेरे सामने सर झुकाए बैठे हैं तो यह सब शैतानी ख़्वाब हैं। हाजी इमदादुल्लाह साहब मुहाजिर मक्की के पास एक छात्र अरबी पढ़ता था और पढ़ने में बहुत ज़हीन था। संयोग से एक रोज़ उसका किसी जंगल से गुज़र हुआ जहां उसको झाड़ी से किसी के सलाम करने की आवाज़ आयी। लेकिन जब वहां उसने देखा तो उसको कोई नज़र नहीं आया। फिर जब वह उसी जगह से दूसरे दिन गुज़रा तो फिर वही सलाम की आवाज़ आयी और ऐसा महसूस हुआ कि झाड़ी में कोई शख़्स है। अतः जब यह लड़का वहां गया तो उसने देखा कि एक सफ़ेद दाढ़ी वाला बुजुर्ग अमामा बांधे हुए बैठे थे। उन्होंने लड़के से उसकी खैरियत पूछी और मालूम किया कि आप क्या पढ़ते हैं तो उसने बताया कि मैं तालीम हासिल कर रहा हूं। लेकिन बुजुर्ग से उस दिन इतनी ही बात पर इत्तिफ़ा हुआ और छात्र घर वापस आ गया। लेकिन उसके बाद उन बुजुर्ग से रोज़ाना की मुलाक़ात शुरू हो गयी। फिर उन्होंने एक दिन उस लड़के से कहा, तुमने कुरआन हिफ़्ज़ कर लिया? लड़के ने जवाब दिया नहीं। बुजुर्ग ने कहा कि अगर तुम हाफ़िज़–ए–कुरआन बन जाओ तो तुमको बहुत फ़ायदा होगा क्योंकि उससे बहुत फ़ायदा पहुंचता है। यानि लड़के के ऊपर इस तरह से शैतानी वार किया कि उसको बुरा भी न लगे। अतः लड़का बुजुर्ग की इस नसीहत को सुनकर अरबी तालीम छोड़कर हिफ़्ज़ करने के लिये तैयार हो गया और उसने आकर पूरा क़िस्सा हज़रत हाजी साहब के सामने बयान किया कि एक बुजुर्ग इस तरह से कह रहे हैं। जिनसे मेरी इस इस तरह मुलाक़ात हुई थी। आप बताइये मुझे क्या करना चाहिये। हाजी साहब ने कहा वह शैतान है जो तुम्हारी तालीम को महदूद (सीमित) करना चाहता है ताकि तुम न इधर के रहो और न उधर के। लेकिन चूंकि लड़का भी उन बुजुर्ग के हुलिये को देखकर प्रभावित हो चुका था और यह समझ रहा था कि उन्होंनें एक अच्छी चीज़ के हासिल करने की राय दी थी लिहाज़ा इसमें कुछ ग़लत नहीं हो सकता। उसने यह सब बातें सोचकर हज़रत हाजी साहब का मशविरा न माना बल्कि हिफ़्ज़ करना शुरू कर दिया। नतीजा यह हुआ कि हिफ़्ज़ में न चल सका और ज़हनी उलझन की वजह से पागल तक हो गया। मालूम हुआ कि इन सब चक्करों में पड़ना एक मुसलमान को शोभा नहीं देता कि वह उसी में उलझा रहे कि फ़ला बुजुर्ग बहुत अच्छे नज़र आ रहे हैं या फ़लां बुजुर्ग ज़माने की चर्चा का विषय बने हुए हैं। बल्कि अस्ल यह देखना ज़रूरी है कि सुन्नत की पैरवी करने वाले कौन हैं और अगर किसी व्यक्ति पर ज़रा भी यह संदेह हो कि यह सुन्नत के विपरीत हैं तो उससे परहेज़ करना चाहिये। इसलिए कि कुरआन–ए–करीम में इरशाद है यानि सच्चे लोगों का साथ अपनाओ। इसलिए कि साथ का असर लाज़िमी तौर पर इन्सान की तबियत पर पड़ता है। लिहाज़ा अगर कोई शख़्स झूठों की सोहबत में रहेगा तो झूठ बोलने का आदी होगा, जोकि शिर्क के बाद सबसे बड़ा गुनाह है। और सच्चों की सोहबत में रहेगा तो सिद्दीक़ बनेगा जो कि नुबूव्वत के बाद सबसे बड़ा मक़ाम है।

हज़रत अबूबक्र को सिद्दीक़ इसलिए कहा जाता है कि आप ही वह अकेले शख़्स हैं जिनको दीन के मामले में कभी भी कोई शक पेश ही नहीं आया। यानि न उनकी ज़बान अटकी न दिल खटका। इसलिए आप सिद्दीक़ के मकाम पर पहुंच गये। यहीं से यह भी मालूम हुआ कि जो सिद्दीक़ होता है उसको न तो शक होता है और न ही खटक पैदा होती है।

क्रमवार:

एकेश्वरवाद क्या है?

बिलाल अब्दुल हयि हसनी नदवी

तीन जाहिली सोच: हज़रत माविया (रज़ि0) से रिवायत है कि रसूलुल्लाह (स0अ0) से पूछा; या रसूलुल्लाह! मुझे इस्लाम लाये हुए थोड़ा सा वक़्त गुज़रा है। अब अल्लाह के फ़ज़ल व करम से इस्लाम का दौर है। लेकिन अभी हममें से कुछ लोग ऐसे हैं जो काहिनों (भविष्यवक्ता) के पास जाते हैं। रसूलुल्लाह (स0अ0) ने कहा: तुम काहिनों के पास न जाना। मैंने पूछा: हममें से कुछ लोग ऐसे भी हैं जो शगुन लेते हैं। आप (स0अ0) ने कहा: यह एक चीज़ है जिसको लोग अपने दिल में पाते हैं। तो उनको चाहिये कि यह चीज़ उनको काम से न रोके। मैंने पूछा: ऐसे भी कुछ लोग हैं जो ख़त खींचते हैं। आप (स0अ0) ने बताया कि एक नबी ख़त खींचते थे तो अगर उन लोगों का ख़त उनके ख़त के समान हों तो ठीक है। (सही मुस्लिम: 1199)

पहली सोच: हज़रत माविया बिन हकम (रज़ि0) ने नबी करीम (स0अ0) की ख़िदमत में सवाल किया कि ऐ अल्लाह के रसूल (स0अ0)! मैं अभी ताज़ा–ताज़ा इस्लाम लाया हूं। अभी मुझसे जमाना जाहिलियत कुछ दूर नहीं। लिहाज़ा उस ज़माने के बहुत से ऐसे काम हैं जिनके बारे में मुझे इस्लाम का दृष्टिकोण नहीं मालूम। उस ज़माने का यह रिवाज था कि हममें से बहुत लोग काहिनों (भविष्यवक्ताओं) के पास जाते थे, क्या जमाना–ए–इस्लाम में यह ठीक है? आप (स0अ0) ने साफ़ कर दिया कि उनके पास मत जाओ।

मना होने का कारण: स्पष्ट रूप इस प्रकार मना होने क कारण यह था कि लोग काहिनों के पास जाते हैं और अपनी क़िस्मत का हाल मालूम करते हैं और यह मालूम करते हैं कि हमारे लिये अमुक काम लाभकारी है या हानिकारक? अर्थात उनसे मशविरे लेते हैं और उनके बारे में यह समझते हैं कि वे ग़ैब (अन्तःकरण) जानते हैं। जबकि उन काहिनों का हाल यह है कि उनका शैतानों से ताल्लुक़ होता है और शैतानों का मामला यह है वे आसमानों के आस–पास चक्कर मारते फिरते हैं और कान लगाये रहते हैं ताकि वहां से कुछ सुनने को मिल जाये और फिर दुनिया में उनके जो अपने चेले–चापड़ हैं उनको आकर बता दें और दुनिया में उनकी चौधराहट क़ायम रखें। इसी चक्कर में शैतान आसमान में घूमते–फिरते रहते हैं और इस कोशिश में रहते हैं कि उनके कानों में कुछ पड़ जाये। इसीलिये वहां शहाबे साक़िब (टूटते तारे) से उनकी पिटाई होती है और वे बुरी तरह वहां से भागते हैं। लेकिन कभी–कभी ऐसा होता है कि उनके कानों में कोई वाक्य पड़ जाता है और वे उसको अपने दोस्तों से आकर बयान करते हैं। फिर वे सब मिलकर अधूरे जुम्ले पर आभास करते हैं और उसमें नमक–मिर्च लगाते हैं और उसके बाद अपने पास आने वालों को उसकी रोशनी में उल्टी–सीधी बातें बताते हैं। ज़ाहिर है शैतानों को आसमान से आधा–पौना जुम्ला मिलता है उससे बात साफ़ नहीं हो सकती है इसीलिए वे ऐसे जुम्ले अपनाते हैं कि चित भी उनकी और पट भी उनकी। यानि ऐसा जुम्ला बोलते हैं कि अगर कोई कहे कि आपने तो यह कहा था; तो वह जवाब में कहेंगे कि हां हमने यही तो कहा था और अगर उसके ख़िलाफ़ कोई दूसरी बात हो जाये और आदमी आकर कहे कि आपने तो यह कहा था तो वे जवाब में कहेंगे हां हम तो यही कह रहे थे। ग़रज कि वे बिल्कुल अस्पष्ट तथा अनिश्चित बात कहते हैं। और जब बात अस्पष्ट होगी तो आदमी जो चाहे उसको अर्थ दे दे। बस इसी तरह वे अपनी दुकान चमकाते हैं। काहिनों का यह दस्तूर पहले भी था और आज भी है। बहुत सी जगहों पर ऐसे लोग बैठे रहते हैं और लोग उनसे जाकर अपनी क़िस्मत का हाल मालूम करते हैं। इसीलिए आप (स0अ0) ने ऐसी नामुनासिब चीज़ों से संबंध रखने को साफ़–साफ़ मना कर दिया।

दूसरी सोच: उपरोक्त सहाबी ने दूसरी बात यह कही कि परिन्दों से शगुन लेने का एक पुराना रिवाज चला आ रहा है और जिन लोगों के दिल व दिमाग़ में यह बात बैठी हुई है कि अगर परिन्दा आदमी के हाथ से उड़कर दाईं

तरफ़ जायेगा तो काम बन जायेगा और बाईं तरफ़ जायेगा तो काम नहीं बनेगा। इस पर आप (स0अ0) ने बताया कि हरगिज़–हरगिज़ लोगों को यह काम करने से न रोके। मसलनः किसी के आगे से बिल्ली रास्ता काट गयी तो वह साहब रास्ता पलट गये और काम को नहीं गये। ऊपर दी गयी हदीस में ऐसे ही लोगों के बारे में साफ़ कह दिया गया कि हरगिज़–हरगिज़ यह चीज़ उनको काम से न रोके। क्योंकि इस अमल से किसी के काम नहीं रुकते। आदमी जो काम कर रहा है उसको वह करना चाहिये। काम अल्लाह के कराने से होते हैं। उसी के फ़ज़्ल व हुक्म से होते हैं और बिल्ली रास्ता काट गयी या परिन्दा बायें तरफ़ चला गया और आलू बोल गया उन चीज़ों से कुछ नहीं होता है। अर्थात इस हदीस में आप (स0अ0) ने साफ़ तौर पर यह कह दिया कि तुम अपने घर से जो इरादा बनाकर लेकर निकलो उसको पूरा करो। अपना काम करो। बात आगे बढ़ाओ और किसी अनजाने नज़रिये को लेकर न बैठ जाओ। यह वहमियों और खुराफ़ातियों के तरीक़े हैं जो उन चीज़ों पर ध्यान देते हैं।

अक़्ली सतहः मौजूदा दौर में भी ऐसे बहुत से अक़्ल के मारे नज़र आते हैं जो इन्हीं चक्करों में पड़े रहते हैं। एक ज़माने में लखनऊ डालीगंज में एक व्यक्ति तोते को पिंजरे में लिये बैठा रहता था और उसके पिंजरे में बहुत सारे काग़ज़ात होते थे। जिनमें लोंगों की क़िस्मतें लिखी होती थीं और लोग उसके पास आकर अपनी–अपनी क़िस्मत का हाल मालूम करते थे। लिहाज़ा जब भी कोई शख़्स आता और अपनी क़िस्मत का हाल जानना चाहता तो वह उस तोते को छोड़ देता और फिर वह तोता अपनी चोंच में उन क़ाग़ज़ात में से जो क़ाग़जा उठाकर ला देता। वह व्यक्ति उस काग़ज़ को खोलकर आने वाले शख़्स की क़िस्मत बताता था। ज़ाहिर है इससे बढ़कर कोई मूर्खता नहीं होगी कि आदमी की क़िस्मत तोते की चोंच में हो जाये और वह जाकर जो काग़ज़ उठा लाये वह आदमी की क़िस्मत हो? बात यह है कि यह आदमी के दिमाग़ की ख़राबी की बात है। जब वह गिरता है तो जानवरों से भी ज़्यादा गिर जाता है। कुरआन मजीद में भी इसकी तरफ़ इशारा किया गया है, अल्लाह तआला का कहना हैः

"वह लोग जानवरों की तरह हैं, बल्कि उनसे भी गये गुज़रे हैं।" (सूरह आराफ़: 179)यानि ऐसे लोग जानवरों से भी ज़्यादा गये गुज़रे हैं। जानवरों में भी किसी हद तक अक़्त होती है। लेकिन जब इन्सान की अक़्ल मारी जाती है तो वह जानवरों से आगे चला जाता है। मालूम हुआ कि परिन्दों से शगुन लेने का रिवाज हर ज़माने में रहा है। लोग परिन्दों से शगुन लेते थे कि अगर इस तरफ़ उड़ा तो यह होगा और इस तरफ़ उड़ा तो यह होगा। इन सब ख़्यालात के बारे में इस्लामी नज़रिया यह है कि ऐसी तमाम चीज़ें बेकार की हैं और उनके चक्कर में पड़ना अक़ीदा को ख़राब करना है।

अल्लाह तआला के फ़ैसलेः अल्लाह तआला का कोई काम हिकमत से ख़ाली नहीं है। इसका हर मामला अजीब–ग़रीब है। कभी–कभी ऐसा होता है कि अल्लाह तआला, जैसी अक़्लें होती हैं, उसके एतबार से फ़ैसले भी फ़रमा देता है। कुरआन मजीद में भी इस राज़ की तरफ़ इशारा हैः "वह जिधर भी रुख़ करेगा, उसी रुख़ पर हम उसे डाल देंगे और उसको जहन्नम रसीद कर देंगे।"

मालूम हुआ जो सीधी राह से पीछे हटता है, उसको हम एक धक्का और मारते हैं। मानो यह अल्लाह की एक व्यवस्था है कि जो आगे बढ़ता है उसको और आगे किया जाता है और जो पीछे जाता है उसको और पीछे किया जाता है। इसीलिए ऐसा बहुत देखा गया है कि आदमी जो अक़ीदा रखता है उसी अक़ीदे के मुताबिक़ हो भी जाता है।

हमारे यहां एक मशहूर क़िस्सा है, जिसको मौलवी महमूद हसन हसनी नदवी के फूफा सुनाते थे कि उनके एक मुसलमान दोस्त और वह खुद एक जगह अफ़सर थे। वह बयान करते हैं कि एक मर्तबा की बात है हम दोनों आफ़िस एक साथ जा रहे थे कि अचानक बिल्ली रास्ता काट गयी। बस वे कहने लगे कि बिल्ली रास्ता काट गयी है आगे जाना मुनासिब नहीं है। उन्होंने उनको बहुत समझाया कि यह बिल्कुल बेकार की बात है। बिल्ली के रास्ता काटने से कुछ नहीं होता। हमको कई बार सामना पड़ चुका है। मगर वे उनके समझाने से किसी सूरत न माने और यही कहते रहे कि जब बिल्ली रास्ता काट जाती है तो बहुत मनहूस साइत होती है। इसीलिए अब मेरा आगे जाना मुनासिब नहीं है। अलबत्ता जब उन्होंने उनको बहुत समझाया, तो वह बात मान गये और आगे की ओर चले गये। मगर चूंकि दिल अन्दर धक–धक हो रहा था। इसलिए क़िस्मत के मारे जब आगे चले तो उनका हाथ टूट गया; बस वे फ़ौरन कहने लगे कि देखिये हसनी साहब! हमने कहा था; बिल्ली रास्ता काट गयी है, लिहाज़ा हमारा

जाना मुनासिब नहीं है। इस पर उन्होंने कहाः रास्ता तो हमारा भी काटा है, हम भी तो साथ में थे, लेकिन हमारा हाथ क्यों नहीं टूटा? इसका मतलब यह है कि आपके दिमाग़ में पहले से फ़ितूर बैठा था। मानो पहले ही आपका हाथ दिमाग़ में टूट चुका था और फिर वही अमल में भी टूट गया।

मालूम हुआ कि अल्लाह तआला का मामला बहुत अजीब है कि आदमी जैसा अक़ीदा रखता है वैसा ही हो भी जाता है और फिर आदमी इसी ग़लत बात पर पुख़्ता यक़ीन कर लेता है। ज़ाहिर है यह सब बेकार की बाते हैं। उनका दीन से कोई लेना–देना नहीं है। बल्कि यह एक तरह का मुश्रिकाना अक़ीदा है। अस्ल बात यह है कि अल्लाह की ज़ात पर भरोसा होना चाहिये। हालात कैसे भी हों अगर अल्लाह की ज़ात पर भरोसा नहीं तो कहां–कहां इन्सान ठोकर खायेगा उसकी कोई ज़मानत नहीं है।

तीसरा तसव्वुरः उपरोक्म हदीस में तीसरा सवाल यह है कि कुछ लोग काग़ज़ पर नक़्श बनाते हैं और उन नक़्शों से ख़ास हिसाब लगाते हैं और उस हिसाब की बुनियाद पर फ़ैसले करते हैं। उस काम के बारे में क्या हुक्म है? आप (स0अ0) ने बतायाः एक नबी थे जिनका यह ख़ास हुनर था। वह खाके़ बनाते थे और ख़ास अंदाज़ से लकीरें खींच कर उससे हिसाब लगाते थे और फिर लोगों को ख़ास तरीक़े से उनके मसले बताते थे। अब अगर वह तरीक़ा कोई जानता हो तो वह ऐसा कर सकता है। लेकिन जब आप (स0अ0) ने फ़रमा दिया कि यह तरीक़ा कोई जानता है तो करे। उससे यह बात साफ़ हो गयी कि कोई शख़्स भी वह तरीक़ा नहीं जानता है और जब नहीं जानता है तो उसके लिये ऐसा करना भी ठीक नहीं है। इसीलिए आज जो लोग इस प्रकार के नक़्श बनाते हैं, लकीर खींचते हैं और उनसे क़िस्मत को मालूम करते हैं, यह बिल्कुल ठीक नहीं है और यह काम नाजायज़ व हराम है। इसलिए कि यह तरीक़ा नबियों वाला तरीक़ा नहीं है। हदीस शरीफ़ में जिन नबी का आप (स0अ0) ने बताया है, उनका तरीक़ा क्या था? वह अल्लाह ही ज़्यादा जानता है। अतः जब वह तरीक़ा नहीं रहा तो ज़ाहिर है कि अब किसी के लिये इस तरीक़े को अख़्तियार करना जायज़ नहीं है। इसलिए कि अब जो भी वह तरीक़ा अख़्तियार करेगा वह अपने ज़हन से करेगा और जब अपने ज़हन से करेगा तो कहां ठोकर खायेगा कुछ नहीं पता। लिहाज़ा जब नबी का तरीक़ा नहीं मालूम है, इसलिए किसी के लिये यह दुरुस्त नहीं है कि वह लकीर खींचकर किसी की क़िस्मत का हाल मालूम करे।

शेषः मानवता की दावत

.....एक–दूसरे के बारे में ग़लतफ़हमी या शिकायत होगी तो हमारी ज़िन्दगी ख़राब हो जायेगी। इसलिए ज़िन्दगी को अच्छा बनाने की ज़रूरत है। जब हमें एक साथ रहना है तो हमें ज़िन्दगी को खुशगवार बनाकर हमदर्दी और आराम के साथ ज़िन्दगी गुज़ारनी है। तकलीफ़ के साथ ज़िन्दगी गुज़ारना कोई अच्छी बात नहीं है। हमारे दिल में दूसरे के मुताल्लिक़ बहुत बदगुमानी हो, हम दूसरे को अपना दुश्मन समझें, हम दूसरे को बुरा समझे, ऐसी सोच नहीं होना चाहिये। इस दुनिया में कोई बुरा नहीं है। सब इन्सान हैं और इन्सान अच्छे होते हैं। किसी इन्सान में जो बुराई पैदा होती है, वह बुराई जब होती है, जब वह उसको अपने अन्दर पैदा करता है, क्योंकि ऐसे लोग भी होते हैं जो शैतान को मानते हैं। और शैतान भी इन्सानों को लड़ाता है। और एक–दूसरे के ख़िलाफ़ उकसाता है। लिहाज़ा हम सब इससे बचें कि अगर कोई बात हम ऐसी सुने जो अनुचित है तो पड़ताल कर लें और इस बात पर हम झगड़ा न करें। इसी तरीक़े से हमारी ज़िन्दगी अच्छी गुज़रेगी और यह देश तरक़्क़ी करेगा और जब देश तरक़्क़ी करेगा तो हम सबको फ़ायदा होगा।

हमको मानवता के संदेश को अपनाना चाहिये। इस तरह कि हम सब इन्सान हैं। हम सब एक बुनियाद पर आ जायें। जब हम विभिन्न धर्मों के लोग हैं तो हमें वह बुनियाद अपनानी चाहिये कि जिसमें हम सब इकट्ठा हो जाएं और वह बुनियाद यह है कि हम इन्सान हैं। जब हम इन्सान हैं तो सारा झगड़ा ख़त्म। अगर हमको तकलीफ़ होती है तो दूसरा इन्सान हमारी मदद करेगा। दूसरे इन्सान को तकलीफ़ होती है तो हम उसकी मदद करेंगे और ज़िन्दगी ख़ुशगवार गुज़ारेंगे तो हमारा देश भी तरक़्क़ी करेगा और हम भी आराम करेंगे और दुनिया के सामने अच्छा नमूना पेश करेंगे। जिसको दुनिया अपनाये तो उसको भी फ़ायदा हो। इसलिए इन्सानियत पर काम करना इन्सानियत का पैग़ाम पहुंचाना लोगों को, बहुत ज़रूरी है। ताकि हमारा देश बेहतर देश बन सके और हम सब भाई–भाई की तरह रह सकें और ख़ुद तरक्क़ी करें और दूसरों को तरक़्क़ी का मौक़ा दें।

मैय्यत को कफ़न दिलाने का शरई हुक्म

मुफ़्ती राशिद हुसैन नदवी

कफ़न का हुक्मः मैय्यत को कफ़न दिलाना फ़र्ज़–ए–किफ़ाया है, और यह ज़िन्दा लोगों की ज़िम्मेदारी है कि वह मुर्दों को कफ़न दिलायें।

(शामीः 1/636)

1. अगर मरने वाले का ज़ाति माल मौजूद हो तो क़र्ज़ की अदायगी, वसीयत को देने और विरासत को बांटने से पहले उसके कफ़न और दफ़न (नहलाने, खुशबू, कफ़न, जनाज़ा और दफ़न) के ख़र्चे उसके माल से पूरे किये जाएं।

2. अगर मरने वाले ने माल न छोड़ा हो तो उसके कफ़न–दफ़न का ख़र्चा उस व्यक्ति पर होगा जिस पर ज़िन्दगी में उसका ख़र्च लाज़िम था और अगर इस तरह के कई लोग हों तो हर कफ़न और दफ़न के ख़र्चे हर एक पर मरने वाले की विरासत में उनके हिस्से के बराबर होंगे। इसकी तफ़सील (व्याख्या) किसी आलिम से मालूम की जाए।

3. अगर कोई ऐसा व्यक्ति मौजूद न हो जिस पर उसका ख़र्च वाजिब था तो अगर हुकूमत इस्लामी हो तो उसको कफ़नाने दफ़नाने की ज़िम्मेदारी राजकोष पर होगी।

4. अगर किसी वजह से हुकूमत यह ज़िम्मेदारी न निभा पाये या हिन्दुस्तान की तरह ग़ैर इस्लामी हुकूमत हो तो मुसलमानों की ज़िम्मेदारी होगी कि उसके कफ़न–दफ़न की व्यवस्था करे।

5. औरत का कफ़न उसके शौहर के ज़िम्मे होगा, चाहे उसका ज़ाति माल ही क्यों न मौजूद हो और मर्द का कफ़न औरत के ज़िम्मे न होगा, चाहे औरत मालदार ही क्यों न हो।

कफ़न की क़िस्में: मर्द व औरत दोनों के कफ़न तीन तरह के होते हैं।

1. कफ़न–ए–सुन्नत
2. कफ़न–ए–किफ़ायत
3. कफ़न–ए–ज़रूरत

मर्द का कफ़न–ए–सुन्नत

कफ़न–ए–सुन्नत मर्द के लिये तीन कपड़े हैं:

1. ईज़ार, सर से पांव तक।
2. लिफ़ाफ़ा (चादर) ईज़ार से लम्बाई में कुछ अधिक ताकि उसमें लाश को लपेटा जा सके और ऊपर नीचे बांधा जा सके।
3. कफ़नी (बग़ैर आस्तीन और बग़ैर कली का कुर्ता) ये गरदन से पांव तक होगा।

औरत का कफ़न–ए–सुन्नत

औरत के लिये कफ़न में ज़रूरी कपड़े पांच हैं:

1. ईज़ार, सर से पांव तक।
2. चादर ईज़ार से लम्बाई में कुछ ज़्यादा।
3. कफ़नी गरदन से पांव तक, बग़ैर आस्तीन की क़मीज़।
4. ख़रक़ा (सीना बन्द) क्षाति के ऊपर से रानों तक हो तो बेहतर है वरना केवल इतनी लम्बाई हो जिससे केवल क्षाति और पेट छिप सके तब भी जाएज़ हैं।
5. तीन हाथ की ओढ़नी।

मर्द का कफ़न–ए–किफ़ायत

1. ईज़ार
2. चादर

औरत का कफ़न–ए–किफ़ायत

1. ओढ़नी
2. चादर, कफ़नी और ईज़ार में से कोई भी दो कपड़े लेकिन ईज़ार और चादर हो तो ज़्यादा बेहतर होगा।

कफ़न–ए–ज़रुरत

उपरोक्त दोनों तरीक़ो से कम कफ़न देना मकरूह है। लेकिन अगर उपलब्ध ही न हो तो जितना हो उतना दिया जा सकता है। यद्यपि किसी न किसी चीज़ जैसे पत्तों या घास इत्यादि से पूरा बदन अवश्य ढ़ांक देना चाहिये।

हज़रत आयशा (रज़ि0) फ़रमाती हैं कि, "रसूलल्लाह (स0अ0) को सुहूल के स्थान के बने हुए तीन सफ़ेद, सूती, यमनी कपड़ों में कफ़न दिया गया था, इसमें न सिली हुई कमीज़ थी न अमामा।

हज़रत लीली बिन्त शफ़किया फ़रमाती हैं कि "मैं

उन औरतों में थी जिन्होने रसूलुल्लाह (स0अ0) की साहबज़ादी (पुत्री) हज़रत उम्मे कुलसूम (रज़ि0) को नहलाया था। आप (स0अ0) ने सबसे पहले हमको लुंगी दी, फिर दरअ (औरतों की कमीज़), फिर ओढ़नी, फिर महलफ़ा (बांधने के लिये कपड़े का टुकड़ा) फिर आख़ीर में उन्हे एक कपड़े में लपेट दिया गया, फ़रमाती हैं: "और रसूलल्लाह (स0अ0) दरवाजे के पास बैठे हुए थे। आप (स0अ0) के पास (उम्मे कुलसूम (रज़ि0) का कफ़न था, जो आप (स0अ0) हमें एक–एक करके दे रहे थे।"

कफ़न दिलाने का तरीक़ा

मर्द को कफ़नाने का तरीक़ा

सबसे पहले चारपाई बिछा कर उस पर कफ़न रखा जाए और एक, तीन या पांच बार उसको लोबान की धूनी दी जाए, फिर चारपाई पर पहले चादर बिछाया जाए, फिर उसके ऊपर ईज़ार बिछाया जाए, फिर मैय्यत को नहाने के तख़्ते से धीरे से लाया जाए और उसे कमीज़ पहना दी जाए, कमीज़ पहनाने के बाद उसके कपड़े को निकाल लिया जाए जिसे नहलाने के लिये पहनाया गया था।

इसके बाद मरने वाले के सर और दाढ़ी पर इत्र लगाया जाए (ज़ाफ़रान और विरस के अतिरिक्त कोई भी इत्र लगाया जा सकता है) फिर उसके माथे, नाक दोनो हथेलियों और दोनों घुटनों और पैरों (यानि सजदा करने वाले सभी अंगो) पर काफूर मल दिया जाए।

फिर पहले बायीं ओर से ईज़ार को लपेटा जाए, इसके बाद दायीं ओर से, इसी तरह चादर को भी पहले बायीं ओर से लपेटा जाए फिर दायीं ओर से, ताकि दाहिनी ओर का कफ़न ऊपर रहे।

फिर कपड़े की पट्टी से कफ़न को सर और पांव की तरफ़ से और बीच में कमर के नीचे से बांध दिया जाए, ताकि कफ़न किसी कारण वश खुलने न पाये।

औरत के ख़रक़े का हुक्म:

जहां तक ख़रक़ा (सीना बन्द) का संबंध है तो उसमें फुक़्हा ने ये भी इजाज़त दी है कि इसको पूरे कफ़न के ऊपर क्षाति से घुटनो तक लपेट दिया जाए या ईज़ार के ऊपर और चादर के नीचे लपेटा जाए, या ईज़ार के नीचे कमीज़ (कफ़नी) के ऊपर लपेटा जाए।

तीन कपड़ों पर इज़ाफ़ा: हज़रत आयशा (रज़ि0) फ़रमाती हैं कि, "रसूलल्लाह (स0अ0) को सुहूल के स्थान के बने हुए तीन सफ़ेद, सूती, यमनी कपड़ों में कफ़न दिया गया था, इसमें न सिली हुई कमीज़ थी न अमामा, लिहाज़ा मर्द के कफ़न में तीन पर इज़ाफ़ा करना या अमामा बांधना ख़िलाफ़े सुन्नत होगा।

जब क़ब्र में लाश बिना कफ़न के नज़र आये: अगर कोई क़ब्र खुदी हुई इस हाल में नज़र आये कि लाश बग़ैर कफ़न के पड़ी हुई हो तो अगर वो लाश जल्द ही दफ़न की गयी है और फटी–फूली नहीं है तो दोबारा उसको सुन्नत के तरीक़े कफ़न दिया जाए और फट–फूल गयी है तो केवल एक कपड़े का कफ़न दिया जाए।

बतौर बरकत किसी कपड़े का कफ़न में इस्तेमाल: हज़रत उम्मे अतिया फ़रमाती हैं कि नबी करीम (स0अ0) हमारे पास तश्रीफ़ लाये जबकि हम आप (स0अ0) की बेटी हज़रत ज़ैनब को गुस्ल दिला रहे थे तो आप (स0अ0) ने फ़रमाया: "उनको तीन या पांच या ज़रूरत समझो तो उससे ज़्यादा बार, पानी और बैर की पत्ती से नहलाओ और आख़िरी बार काफूर (या फ़रमाया कुछ काफूर) डाल दो और फ़रमाया जब फ़ारिग़ (निवृत्त) हो जाओ तो हमें ख़बर करो। इसलिये जब हमको फ़राग़त हुई तो हमने आप (स0अ0) को ख़बर कर दी। आप (स0अ0) ने हमें अपनी लुंगी दी और फ़रमाया: इसको बदन से जोड़ कर पहना दो।"

इस हदीस से मालूम हुआ कि किसी बुज़ुर्ग के इस्तेमाल शुदा कपड़े को भी इस्तेमाल करना न सिर्फ़ जायज़ बल्कि नये कपड़ों से भी बेहतर है। इस कपड़े को या कफ़नी के तौर पर इस्तेमाल करे या छोटा हो तो कफ़नी में जोड़कर इस्तेमाल करे, यही हुक्म ज़मज़म में तर किये हुए कपड़े और ग़िलाफ़े काबा का भी है। लेकिन अगर ग़िलाफ़े काबा लिखी हुईं हों तो कफ़न के तौर पर इस्तेमाल करना बेअदबी के सबब ममनूअ होगा। (एहकाम–ए–मैय्यत: 46)

जिस तरह से कपड़े ज़िन्दगी में पहनना जायज़ है, उसी तरह के कपड़े का कफ़न भी देना जायज़ है। चुनान्चे मुर्दों के लिये रेशम इत्यादि का कफ़न नाजायज़ है, औरतों के लिये ठीक है, लेकिन बेहतर यह है कि, सफ़ेद कपड़ों का कफ़न दिया जाये, कपड़ा नया हो या पुराना, अगरचे रंगीन कपड़े का भी कफ़न जायज़ है। (शामी: 1/639)

आख़िरत पर ईमान

अब्दुस्सुब्हान नाख़ुदा नदवी

इन्सान अपनी हस्ती और वजूद के लिहाज़ से अल्लाह की वहदानियत पर गवाह है, वह क्या था? एक ऐसी चीज़ जिसका सिरे से वजूद ही नहीं था। फिर वह पैदा हुआ। इस दुनिया में आया, फिर कुछ मुद्दत के बाद उसे निसंदेह मौत आ जायेगी। जो अपनी हस्ती के लिहाज़ से इस क़दर नाक़ाबिले एतबार है, वह किस मुंह से अपने पैदा करने वाले का इनकार कर सकता है? उसके इनकार की हैसियत ही क्या है? उसे तो अपनी तमाम सच्चाइयों के साथ वास्तविक मालिक के सामने सज्दा मे चले जाना चाहिये। कुरआन करीम में एक मौक़े पर ताज्जुब के इज़हार के साथ कहा गया है कि आख़िर इन्सान कुफ़्र कैसे कर लेता है। जबकि वह अपनी हस्ती और अपने वजूद के लिहाज़ से अल्लाह की वहदानियत (एकेश्वरवाद) पर गवाह है। अल्लाह तआला का इरशाद हैः "तुम कैसे अल्लाह का इनकार करते हो, जबकि तुम मुर्दा थे, उसने तुम्हें ज़िन्दगी बख़्शी, फिर वह तुम्हें मौत देगा, फिर ज़िन्दा करेगा, फिर तुम उसी की तरफ़ लौटाए जाओगे।"

इस आयत में ख़िताब काफ़िरों से है, जिनमें यहूद व नसारा सब शामिल हैं। अरब के बहदुदेववादी (मुश्रिकीन) इस बात पर विश्वास रखते थे कि इनका पैदा करने वाला अल्लाह ही है।

अगर आप उनसे पूछें कि किसने उन्हें पैदा किया तो ज़रूर कहेंगे कि अल्लाह ने।

अरब के बहदुदेववादियों (मुश्रिकीन) का कुफ़्र यह था कि उन्होंने मख़लूक़ को ख़ालिक़ के मक़ाम तक पहुंचाया और मौत के बाद दोबारा ज़िन्दा होने को अल्लाह की कुदरत से बाहर की बात समझा। ईसाईयों का कुफ़्र यह था कि हज़रत ईसा को अल्लाह का बेटा या अल्लाह ही क़रार दिया। यहूद का कुफ़्र यह था कि अल्लाह की शान में गुस्ताख़ी की और अल्लाह की शरीअत को खेल–तमाशे की हैसियत दी। अल्लाह के पैग़ाम को ठुकराने में ज़रा भी शर्म न की। मुलहिदीन और दहरियों (अधर्मियों) का कुफ़्र यह है कि सिरे से अल्लाह की ज़ात ही को स्वीकार नहीं किया और बड़ी बेशर्मी से यह मूर्खतापूर्ण ख़्याल बना लिया कि कायनात का यह सारी व्यवस्था खुद बखुद वजूद में आई और खुद ब खुद अपनी तरतीब क़ायम की और खुद ब खुद अपनी क़ायम की हुई तरतीब पर चल निकली। इल्लत व मलूल के दरमियान बारीक से बारीक रब्त तलाश करने वाले, ख़ालिक़ व मख़लूक़ के दरमियान कोई रब्त तलाश न कर सके और वहां पहुंच कर हार गये जहां उनको कामयाबी की सबसे ज़्यादा ज़रूरत थी। आख़िरत के बारे में उनका इल्म जवाब दे गया। बल्कि वह शक में पड़े हैं। बल्कि वह पूरे अंधे हैं इस मामले में। सच है इल्हाद और दहरियत से बढ़कर इस कायनात में कोई मूर्खता नहीं। एक नादान बच्चा भी किसी मामूली चीज़ से बारे में कैसे का सवाल करता है और खुद ब खुद के जवाब से मुतमईन नहीं होता। तो आख़िर इतनी अज़ीमुश्शान कायनात के बारे में कैसे और क्यों के जवाब को खुद ब खुद के अंधे कुवें में कैसे धकेला जा सकता है, जबकि यह वह लोग हैं जिनको खुद यह दावा है कि उन्होंने कायनात के राज़ को जान लिया है। ढूंढने वाला सितारों की गुज़रगाहों का अपने अफ़कार की दुनिया में सफ़र कर न सका।

उपरोक्त आयत में इन्सान की बेबसी की मुकम्मल तस्वीर खींच दी गयी है। फ़रमायाः "जबकि तुम मुर्दा थे।"

आयत में इन्सान की मुकम्मल बेबसी की तस्वीर है ताकि अल्लाह रब्बुल इज़्ज़त की अज़मत इन्सान के दिल व दिमाग में बैठ जाये। यह इन्सानी फ़ितरत है कि जिसके सामने अपनी बेबसी का जिस क़द्र एहसास होता है उसकी वैसी ही अज़मत उसके दिल पर छप जाती है। इन्सानी ज़िन्दगी के तीन मरहले ऐसे हैं जिनको हर इन्सान तय करता है।

1. मुर्दा से ज़िन्दगी बख़्शी
2. ज़िन्दगी से मौत देना।
3. मौत के बाद दोबारा ज़िन्दा करना।

कुरआन करीम में इन्हीं मरहलों को बुनियाद कर बाद के मरहलों पर भी ईमान रखने की दावत दी गयी है। जब शुरू के तीन मरहलों में इन्सान के हाथ में कुछ नहीं है तो फिर बाद के मरहलों का इनकार आख़िर किस बुनियाद पर कर सकता है।

उपरोक्त आयत ही से दलील देते हुए कई लोगों ने परलोक या अज़ाबे क़ब्र का इनकार किया है लेकिन इनकार की कोई वजह नहीं। .....शेष पेज 14 पर

मीडिया का गिरता स्तर लोकतन्त्र के लिये ख़तरा

जनाब मुहम्मद अब्बास

हमारा देश दुनिया का सबसे बड़ा लोकतन्त्र है। लोकतन्त्र जिन स्तम्भों पर स्थापित है, उनमें प्रेस और मीडिया को बहुत ही महत्वपूर्ण एवं मज़बूत स्तम्भ माना जाता है। इसीलिए लोकतान्त्रिक देशों में मीडिया की ज़िम्मेदारी बहुत ही विशेष व महत्वपूर्ण होती है। इस क्रम में सरकार की विभिन्न पॉलिसियों को लोगों तक पहुंचाने में मीडिया का अपना एक ख़ास व अहम रोल होता है, जबकि दूसरी ओर जनता की समस्याओं, कठिनाइयों और आवश्यकताओं को सरकार तक पहुंचाने में भी मीडिया अहम रोल निभाता है या यूं कह लें कि मीडिया, जनता और सरकार के बीच एक पुल का काम करता है। लोकतान्त्रिक देशों में सरकार के पक्ष में या विपक्ष में जनता की राय बनाने में भी मीडिया का अहम रोल होता है। लोकतान्त्रिक देश में कार्यरत एक मीडिया हमेशा देश की जनता से संबंधित दैनिक जीवन में आने वाली समस्याओं को सरकार के सामने न केवल उजागर करता है बल्कि उनका हल निकालने में सरकार का सहयोग व मार्गदर्शन भी करता है। पिछले कुछ महीने से हमारे देश के छोटे–बड़े व्यापारी जिस प्रकार से जी.एस.टी. की रिटर्न भरने जैसी पेचीदा समस्या के संबंध से परेशानियों का सामना कर रहे हैं, उनको देखकर यह सोचने पर मजबूर होना पड़ता है कि क्या उनके दुख–दर्द को सरकार तक पहुंचाने वाला कोई मसीहा रूपी मीडिया है?इसी तरह गिरती जी.डी.पी. और पेट्रोल, डीज़ल की क़ीमतों में होने वाली बढ़ोत्तरी से बढ़ती मंहगाई से बेहाल, ग़रीब जनता की भी ख़बर लेने वाला कोई नज़र नहीं आता और नवजवानों में बढ़ रही बेरोज़गारी और जैसी कितनी ही समस्याएं हैं जिन पर ख़बरें व चर्चा अधिकांश न्यूज चैनलों के कैनवस से ग़ायब नज़र आते हैं।

इस समय देश की मीडिया के जो हालात हैं वे अत्यधिक शोचनीय हैं। इस पर सितम यह कि आज हमारा मीडिया अपना वह कर्तव्य नहीं निभा पा रहा जो उसके मूलभूत कर्तव्यों में से एक है। मीडिया विशेषज्ञ यह महसूस करते हैं कि महत्वपूर्ण मुद्दों से ध्यान हटाने के लिये किसी न किसी हद तक मीडिया को मैनेज किया जाता है। इसके अतिरिक्त अंग्रेज़ी न्यूज़ चैनलों और हिन्दी न्यूज़ चैनलों में की ख़बरों में अन्तर पाया जाता है। जिन मुद्दों पर बहुत ज़ोर–शोर से हिन्दी न्यूज़ चैनलों पर बहस दिखाई जाती हैं, वे मुद्दे अंग्रेज़ी चैनलों में एकदम ग़ायब होते हैं। इससे इस बात को भी बल मिलता है कि हिन्दी व अंग्रेज़ी दर्शकों की सोच में काफ़ी अन्तर है। वर्तमान समय में इलेक्ट्रानिक मीडिया या अपनी टी.आर.पी. बढ़ाने की होड़ के कारण अच्छी–बुरी ख़बरों में अन्तर करने के बजाय ख़बरों को मिर्च–मसाला लगाकर और अधिक से अधिक सनसनीखेज़ बनाकर पेश करता है, चाहे उन ख़बरों का समाज पर कितना ही नकारात्मक प्रभाव पड़े। मीडिया जानबूझकर या अनजाने में समाज की ज़मीनी वास्तविकता या लोगों के अस्ल दुख–दर्द को दिखाने से परहेज़ करता हुआ दिखाई देता है। यही कारण है कि पिछले कई बरसों के अवलोकन से यह बात सामने आयी है कि एक–दो न्यूज़ चैनलों को छोड़कर बाक़ी के सभी न्यूज़ चैनल ख़बरें दिखाने के नाम पर जनता से मज़ाक़ कर रहे हैं। जैसी वाहियात क़िस्म की और बिना सर–पैर की ख़बरें और चर्चाएं (डिबेट) उन चैनलों पर सनसनीखेज़ बनाकर ऐंकरों की भरपूर अदाकारी के साथ पेश किये जाते हैं। इस कारण से जनता के जीवन से संबंधित वास्तविक मुद्दे पर्दे के पीछे चले जाते हैं।

पिछले कुछ महीनों का ही यदि हम अवलोकन करें तो अधिकतर न्यूज़ चैनल ख़बरों के नाम पर जनता व लोकतन्त्र की धज्जियां उड़ाते नज़र आते हैं। 25 अगस्त से लगातार जिस प्रकार गुरमीत बाबा राम–रहीम और हनीप्रीत के क़िस्से–कहानियों पर ब्रेकिंग न्यूज़ बनाकर प्रस्तुत कर रहे हैं और जिस प्रकार व्यवहारिक स्तर की सभी सीमाएं लांघी जा चुकी हैं, वह स्वयं में एक उदाहरण है। कुछ ख़बरे तो इतनी अव्यवहारिक थीं कि परिवार के साथ बैठकर देखना भी मुश्किल था और

शायद ऐसी पत्रकारिता की मिसाल देना भी मुश्किल है। देखा जाये तो देश की ग़रीब व बेरोज़गार जनता को भला बाबा राम–रहीम या हनीप्रीत की कहानियों से क्या लाभ हो सकता है?बाबा राम–रहीम का हनीप्रीत से क्या रिश्ता है?.....या जेल में बाबा के दिन–रात कैसे कट रहे हैं?.....या सलमान ख़ान शादी कब करेगा?..... ऐसी ख़बरों से भला देश में दो वक़्त का खाना जुटाने में व्यस्त ग़रीबों का क्या सरोकार हो सकता है?ऐसी ख़बरों से देश व क़ौम का क्या भला हो सकता है?

जब भी किसी बर्निंग स्कैन्डल या मुद्दे से ध्यान हटाना हो तो एक वर्ग के किसी ग़ैरज़िम्मेदार व्यक्ति की ओर से दूसरे वर्ग के ख़िलाफ़ ऐसा भड़काऊ बयान दाग़ दिया जाता है जिस पर देश के दोनों वर्गों के मासूम लोग दांत पीस कर रह जाते हैं जबकि बड़े स्कैन्डल्स या इशूज़ को पर्दे के पीछे डालकर हमेशा के लिये दबा दिया जाता है, लेकिन ऐसा नहीं होना चाहिय। मीडिया को समूचे देश के हालात का आइना बनना चाहिये।

यदि हम देशवासी सही अर्थों में देश उन्नतिशील व प्रगतिशील बनाना चाहते हैं तो हम लोगों को अपनी सोच व नज़रिये में बदलाव लाना होगा। हमें ऐसे न्यूज़ चैनलों से अच्छी, उच्चस्तरीय और समाज को सही दिशा दिखाने वाली ख़बरों की मांग करनी चाहिये। यदि फिर भी कुछ तथाकथित न्यूज़ चैनल नफ़रत फैलाने वाली ख़बरों के द्वारा जनता का वैचारिक शोषण करने से बाज़ नहीं आते तो उनका बायकाट करना चाहिये।

देश की मीडिया से जुड़े हर छोटे–बड़े ज़िम्मेदारों का यह कर्तव्य है कि वे अपने सभी निजी उद्देश्यों को ताक़ पर रखते हुए जनता व लोकतन्त्र की सुरक्षा के लिये पुख़्ता सबूतों पर आधारित सच्ची पत्रकारिता करें। जहां तक हो सके, धर्म व साम्प्रदायिकता के नाम पर नफ़रत फैलाने वाली और जनता को बांटने वाली ख़बरों को पेश करने से बचें। इस देश की गंगा–जमुनी सभ्यता और आपसी प्रेम व सौहार्द को बढ़ावा देने वाली, समाज में अच्छाई को बढ़ावा देने वाली ख़बरों को अधिक से अधिक प्रकाशित करें। निसंदेह इसी में देश व क़ौम और हम सबकी भलाई व उन्नति का राज़ छिपा हुआ है।

शेषः आख़िरत पर ईमान

इसलिए कि हदीस से परलोक का जीवन साबित है। इस आयत में परलोक के जीवन की काट नहीं है। इसमें सिर्फ़ उन ज़िन्दगियों के बारे में वज़ाहत है जिसे हासिल करने में सब समान हैं और जो बुनियादी ज़िन्दगियां हैं उस लिहाज़ से दो ज़िन्दगियां बुनियादी हैं। एक दुनियावी ज़िन्दगी जिसे हम दारुल अमल कहते हैं। दूसरी परलोक ज़िन्दगी जो क़यामत क़ायम होने के बाद शुरू होगी, उसे परलोक का जीवन कहते हैं। इसके अलावा कई ज़िन्दगियां हैं जो ज़िमनी हैसियत रखती हैं। क़ुरआन करीम आम तौर पर बुनियादी काम बयान करता है इसलिए यहां भी ख़ास दो ज़िन्दगियों का तज़किरा है। इसके अलावा बरज़ख़ी ज़िन्दगी भी है। यह आख़िरत अर्थात परलोक की ज़िन्दगी के अधीन है। किसी के हक़ में यह ज़िन्दगी ताक़तवर होती है, जैसे नबी। किसी के हक़ में यह निहायत पुरबहार होती है, जैसे शहीदों की ज़िन्दगी। किसी के लिये ऐसी नफ़ीस कि उनके जिस्म तक पर कोई असर नहीं पड़ता, जैसे अम्बिया की ज़िन्दगी। लेकिन चूंकि यह ज़िम्नी ज़िन्दगी है इसलिए इसका अलग से ज़िक्र नहीं किया गया। इस तरह देखा जाये तो तमाम इन्सानों की अरवाह को अल्लाह ने पैदा करके उनसे अहद लिया। लिहाज़ा यह एक ज़िन्दगी हुई। इससे पहले की हालत को मौत से ताबीर किया जाये फिर अहद के बाद वह दोबारा मां के पेट से पैदा होने तक बेजान या मादुम ही रहे, फिर मां के पेट से पैदा हुए यह दूसरी ज़िन्दगी होगी, यह अरवाह की पैदाइश और उससे सवाल भी दरहक़ीक़त एक ज़िमनी ज़िन्दगी है जिसे हम इस दुनिया हक़ीक़ी ज़िन्दगी के लिये एक तम्हीद क़रार दे सकते हैं। इसी तरह अल्लाह ने दुनिया में जिस किसी को मौत देकर दोबारा ज़िन्दा किया वह भी एक तरह से ज़िमनी और ज़ेली ज़िन्दगी ही है। इस मामले को और वुसअत दी जाये तो रात के वक़्त की हर नींद एक मौत है। और जिस्म की हर बेदारी एक नई ज़िन्दगी है। लेकिन यह सारी नींदे और बेदारियां एक ज़िन्दगी के ताबेए हैं। इसलिए क़ुरआन बुनियादी बातों के दौरान इस तरह के ज़ेली मुबाहिस बयान नहीं करता। बरज़ख़ी ज़िन्दगी को भी इसी की क़बील से समझा गया। बाक़ी ज़िन्दगी का सुबूत अहादीस से साबित है जिसमें अदना शक की भी गुंजाइश नहीं।

सीरिया का गृहयुद्धः एक विश्लेषण

मौलाना नदीमुल वाजिदी साहब

गृहयुद्ध का शिकार देश; सीरिया में मासूम नागरिकों की मौत का सिलसिला जारी है। पिछले हफ़्ते से राष्ट्रपति बश्शारुल असद की फ़ौजें रूस व ईरान की मदद से ग़ोता शरक़िया नामक इलाक़े पर लगातार ज़मीनी और हवाई हमले कर रही हैं। पूरा इलाक़ा देश की हवाई सेना और ज़मीनी दस्तों के घेरे में है। इन हमलों में अब तक पांच सौ नागरिक मारे जा चुके हैं, उनमें डेढ़ सौ के क़रीब मासूम बच्चे शामिल हैं। सोशल मीडिया पर मारे गये तथा ज़ख़्मी बच्चों की दिल दहला देने वाली तस्वीरें लगातार वायरल हो रही हैं। लेकिन पूरी दुनिया ख़ामोश तमाशाई बनी हुई है। अन्तर्राष्ट्रीय बिरादरी सीरिया की ज़ालिम और अत्याचारी हुकूमत को उन अत्याचारों से दूर रखने में पूरी तरह नाकाम है। यद्यपि ज़बानी निंदा का सिलसिला जारी है। मगर अमली तौर पर कोई ठोस क़दम नहीं उठाया जा रहा है। संयुक्त राष्ट्र के सेक्रेट्ररी जनरल बड़े बेबस नज़र आ रहे हैं। वह सिर्फ़ इतना चाहते हैं कि सीरिया के दोनों ग्रुप एक माह की जंगबन्दी पर राज़ी हो जाएं ताकि ज़ंग ज़दा इलाक़ों में सहायता सामग्री पहुंचायी जा सके। जख़्मियों की मरहम पट्टी हो और मरने वालों की सही संख्यां मालूम हो जाये।

ख़बर है सुरक्षा कौन्सिल ने सीरिया में तीस दिनों के लिये जंग बन्दी का प्रस्ताव सबकी सहमति से मंज़ूर कर लिया है। रूस से ख़तरा था कि अगर सुरक्षा कौन्सिल में इस तरह का कोई प्रस्ताव आता है तो वह उसे वीटो कर देगा। इस ख़तरे को देखते हुए कई बार वोटिंग आगे की जा चुकी थी। यह ख़बर है कि प्रस्ताव की मंज़ूरी के बावजूद हवाई बमबारी का सिलसिला जारी है। यह अंदेशा ज़ाहिर किया जा रहा है कि बश्शार की फ़ौजें जिनकी पीठ पर ताक़तवर रूस है किसी भी क़ीमत पर जंगबन्दी के फ़ैसले का सम्मान नहीं करेंगी और उनकी तरफ़ से ''बाग़ियों'' और ''दहशतगर्दों'' को कुचलने का सिलसिला उसी तरह जारी रहेगा।

सीरिया कई सालों से गृहयुद्ध का शिकार है। पूरा देश खंडहर बन चुका है। आधी के क़रीब आबादी देश छोड़ चुकी है। हज़ारों लोग सुरक्षित जगहों तक पहुंचने के लिये समन्दरों में सफ़र करते हुए पानी में डूब चुके हैं। तबाही और बर्बादी का यह सिलसिला रुक सकता था अगर बड़ी ताक़ते अपनी जंग जो फ़ितरत से तस्कीन के लिये और अपने हथियारों को ठिकाने लगाने की ख़ातिर इस ख़ित्ते को जंग के मैदान में तब्दील न करतीं।

सीरिया जिसे अरबी में सूरिया और इंग्लिश में सीरिया कहते हैं, मध्य का सबसे पुराना देश है। एशिया महाद्वीप के अन्तिम छोर पर स्थित यह देश अरब जम्हूरिया–ए–शाम कहलाता है। इसके पश्चिम में लेबनान, दक्षिण पश्चिम में फ़िलिस्तीन और इस्राईल, दक्षिण में जार्डन, पूर्व में इराक़ तथा उत्तर में तुर्की स्थित है। पुराने ज़माने में सीरिया उस पूरे क्षेत्र में स्थित था जिसमें अब सीरिया, लेबनान, जार्डन, फ़िलिस्तीन और इस्राईल स्थित है। ख़लीफ़ा–ए–अव्वल हज़रत अबूबक्र (रज़ि0) ने 13 हिजरी में हज़रत ख़ालिद बिन वलीद को हुक्म दिया था कि वह इराक़ से फ़ारिग़ होकर सीरिया का रुख़ करें। इस तरह सीरिया विजय का सिलसिला शुरू हुआ जो 14 हिजरी में उस वक़्त पूरा हुआ, जब हज़रत उमर बिन अलख़त्ताब (रज़ि0) ख़लीफ़तुल मुस्लिमीन बन चुके थे। इससे पहले यहां बाज़नतीनी हुकूमत क़ायम थी। सीरिया का मौजूदा दारुलहुकूमत दमिश्क़ तक़रीबन अस्सी बरस तक खुल्फ़ाए बनू उमैया का दारुल ख़िलाफ़ा भी रहा है। वैसे भी यह अम्बिया किराम की सरज़मीन है। इसका चप्पा–चप्पा पैग़म्बराने खुदा के क़दमों से मुनव्वर रहा है। एक रिवायत के मुताबिक़ जो हदीस की बहुत सी किताबों में मौजूद है, और जिसे फ़न की इस्तलाह में हदीसे मुतवातिर कहा जाता है, ख़ुरूजे दज्जाल के बाद हज़रत ईसा अलैहिस्सलाम दमिश्क़ की जामेअ मस्जिद की मश्रिक़ी मीनार पर उतरेंगे और बाबे लुद पर जाकर दज्जाल को क़त्ल करेंगे। यह इलाक़ा पहले मुत्तहिदा शाम का हिस्सा था और अब इस्राईल में है। इस वाक़्ये से पहले हज़रत इमाम मेंहदी रज़ि0 का हिजाज़े मुक़द्दस से

हिजरत करके दमिश्क़ में आकर क़याम करेंगे, इसका भी ज़िक्र रिवायत में मिलता है। हक़ीक़त यह है कि सरज़मीने शाम और उसके पाये तख़्त दमिश्क से इस्लाम और मुसलमानों का मुहब्बत व अक़ीदत का रिश्ता है। मशहूर मुहद्दिस और मुअर्रिख़ हाफ़िज़ इब्ने आकर जिन्होंने अस्सी जिल्दों में दमिश्क़ की तारीख़ लिखी है फ़रमाते हैं कि: शाम कितनी मुबारक जगह है, सहाबा किराम ने अर्ज़ किया कि वह कैसे या रसूलुल्लाह स0अ0?फ़रमाया: मैं अल्लाह के फ़रिश्तों को देखता हूं कि उन्होंने शाम के ऊपर अपने पर फैला दिये हैं। (तिरमिज़ी, मुसनद अहमद, इब्ने माजा)

एक हदीस में है, अल्लाह के रसूल स0अ0 ने इरशाद फ़रमाया, जब फित्ने रौनुमा होंगे तो ईमान शाम में होगा। (तिबरानी)

ग़ैर मुनक़सिम अर्ज़े शाम की फ़ज़ीलत के लिये यह बात काफ़ी है कि इस सरज़मीन पर मस्जिदे अक़्सा है, जो मुसलमानों का क़िब्ला अव्वल भी है। आजकल शाम के शहर ग़ोता पर हमले हो रहे हैं। इस शहर के मुताल्लिक भी सरकारे दो आलम स0अ0 का इरशाद–ए–मुबारक मौजूद है, फ़रमाया: खूंरेज़ जंग के दिन मुसलमानों की पनाहगाह ग़ोता होगा, जो इस शहर के किनारे पर वाक़े है, जिसे दमिश्क़ कहा जाता है। यह शाम के शहरों में से बेहतरीन शहर है। (सुनन अबी दाऊद)

मुल्के शाम 636 ईसवी से 1920 ईसवी तक मुसलमानों के ज़ेरे नगीं रहा, आख़िर में सलतनते उस्मानिया के तहत रहा, शरीफ़े मक्का ने बर्तानिया की शह पर ख़िलाफ़ते उस्मानिया से बग़ावत की, अवलन वहां एक कठपुतली सरकार क़ायम हुई। 1920 ईसवी में फ़्रांस ने इस पर क़ब्ज़ा कर लिया और इस अज़ीमुश्शान देश को छः रियासतों में तक़सीम कर दिया। दूसरे विश्व युद्ध के बाद फ़्रांस की ताक़त कमज़ोर पड़ गयी और वह यह महसूस करने लगा कि अब वह शाम पर अपना क़ब्ज़ा बरक़रार नहीं रख पायेगा। उन हालात में इसने यह फ़ैसला किया कि उसे देश से निकल जाना चाहिये। इस तरह 1946 ईसवी में इस मुल्क को फ़्रांसीसी इस्तेमारसे आज़ादी तो मिल गयी लेकिन वहां अर्से तक कोई मुस्तहकम और मज़बूत हुकूमत क़ायम न हो सकी। मुख़्तलिफ़ वक़्तों में कई फ़ौजी इन्क़िलाब आये, कई क़ौमी हुकूमतें बनीं, 1946 ईसवी से 1956 ईसवी तक सिर्फ़ दस बरस में यहां बीस से ज़्यादा सरकारें बनीं, चार से अधिक बार संविधान बनाकर लागू किया गया। अगले कुछ साल भी इसी उथल–पुथल की नज़र हो गये। 1964 ईसवी में हाफ़िज़ अमीन बरसरे इक़्तिदार आये। उनकी हुकूमत में अगरचे हर तबक़े की नुमाइन्दगी थी, मगर अस्ल अख़्तियार फ़ौज को था। मौजूदा सदर के वालिद हाफ़िज़ अलअसद ने जो उस हुकूमत में वज़ीरे दिफ़ाअ थे 1970 ईसवी में फ़ौजी बग़ावत करके हुकूमत पर क़ब्ज़ा कर लिया। उनके इक़्तिदार की कुल मुद्दत तीस साल है। यह शख़्स अलवी नसीरी था। इस फ़िरक़े के बारे में कहा जाता है कि यह मुसलमानों का सबसे बड़ा दुश्मन है और उसकी तारीख़ यह रही है कि उसने इस्लाम के दुश्मनों के साथ मिलकर इस्लाम और मुसलमानों को सख़्त नुक़सान पहुंचाया है। हाफ़िज़ अलअसद ने बरसरे इक़्तिदार आने के बाद सुन्नी मुसलमानों को किनारे लगा दिया। फ़ौज और हुकूमत के तमाम बड़े ओहदे नसीरी फ़िरक़े के लोगों में तक़सीम कर दिये। अमलन यह मुल्क हाफ़िज़ अलअसर की जागीर बन गया। जो भी उसके रास्ते में आया उसने उसे हरफ़े ग़लत की तरह मिटा दिया। उसने बीस हज़ार उलमा अहले सुन्नत को या तो क़त्ल करा दिया या जेलों में डलवा दिया। 1982 ईसवी में सुन्नी मुसलमानों में शाम के शहर हिमाता में हाफ़िज़ुल असद के ज़ुल्म व बरबरियत के ख़िलाफ़ अलमे बग़ावत बुलन्द किया जिसे फ़ौजी ताक़त के बल पर कुचल दिया गया। दस हज़ार लोग मारे गये। पूरा शहर खंडहर में तब्दील कर दिया गया। दो हज़ार ईसवी में हाफ़िज़ अल असद के इन्तिक़ाल के बाद बश्शारुल असद हुक्मरां बना। यह भी अपने बाप के नक़्शे क़दम पर है। शिया नवाज़ सुन्नियों का मुख़ालिफ़, ज़ालिम और जाबिर हुक्मरां की हैसियत से वह अपने बाप से भी दो–चार क़दम कुछ आगे ही है।

पांच साल पहले आलमे अरब में बहारे अरब के उनवान से तब्दीली की जो लहर चली थी उसका असर इस देश में भी महसूस किया गया। फ़रवरी 2011 में लोग सड़कों पर निकल आये। वह चालिस साल से ज़्यादा लगी इमरजेंसी और उसके नतीजे में ढाये जाने

वाले मज़ालिम के ख़िलाफ़ इहतिजाज कर रहे थे। बश्शारुल असद की फ़ौजों ने इन पुर अमन मज़ाहिरीन पर तोप के दहाने खोल दिये। इस तरह हालात बिगड़े और बिगड़ते चले गये। पूरा मुल्म ख़ाना जंगी का शिकार हो गया। कई तंज़ीमे वजूद में आयीं जो यह तय किये हुए हैं कि बश्शारुल असद को हटाकर दम लेंगी। फ़ौज भी मुनक़सिम हो गयी। पांच साल की इस मुद्दत में ढाई लाख से ज़्यादा लोग मारे गये। लाखों लोग नक़ल मकानी करके तुर्की, लेबनान, और दूसरे मुल्कों में पनाह गंज़ीं की हैसियत से रहने को मजबूर हैं। आज भी एक करोड़ अस्सी लाख से ज़्यादा लोग इस जंग ज़दा मुल्क में मौजूद हैं जिनमे बड़ी तादाद शिया नसीरियों की है। सुन्नी मुसलमान अव्वल तो कम रह गये हैं जो हैं वह बश्शारुल असद की बमों, तोपों, और गोलियों के निशाने पर हैं। एक वक़्त ऐसा भी आया जिसमें लगता था कि बश्शारुल असद बस अब जाने ही वाला है। मगर 2012 में ईरान की दहशतगर्द तंजीम हिज्बुल्लाह बश्शारुल असद की हिमायत में आ गयी और उसने सरहदें उबूर करके सुन्नी मुसलमानों को निशाना बनाना शुरू कर दिया। सितम्बर 2013 में रूस ने मदाख़लत शुरू की। अब सूरते हाल यह है कि बश्शारुल असद ईरान और रूस के साथ मिलकर सुन्नी आबादी को नेस्त व नाबूद करना चाहता है। दूसरी तरफ़ कुछ मुस्लिम मोमालिक हैं जो अमरीका की क़यादत में सुन्नियों का कमज़ोर दिफ़ाअ कर रहे हैं। यह बज़ाहिर शाम की सरज़मीन पर अमरीका और रूस दोनों एक दूसरे से लड़ रहे हैं। लेकिन हक़ीक़त यह है कि दोनों इस मुल्क को तबाह व बर्बाद करने के दरपे हैं। बैनुल अक़वामी तजज़िया निगारों का कहना है कि इस जंग में रूस और ईरान कामयाबी के हदफ़ तक पहुंचने वाले हैं जबकि अमरीका सऊदी अरब और तुर्की अपने मक़सद के हुसूल में नाकाम हैं। इस सूरते हाल पर नज़र रखने वाले मुबस्सिरीन का कहना है कि शाम की इस जंग में रूस और अमरीका हरीफ़ नहीं हलीफ़ हैं, जिनका वाहिद मक़सद बश्शारुल असद के इक़्तिदार को मुस्तहकम करना और सुन्नी मुसलमानों का इस ख़ित्ते से सफ़ाया करना है। दोनों ने दाइश और दौलते इस्लामिया का हव्वा खड़ा कर रखा है जिनका कोई ज़मीनी वजूद नहीं है। अमरीका और रूस दोनों फ़िज़ाई हमले कर रहे हैं। बल्कि रूस के मुताल्लिक तो यह भी इत्तिलाआत हैं कि रूस ने इन हमलों में कीमियाई हथियार भी इस्तेमाल किये हैं। शाम की सरज़मीन इन दोनों आलमी ताक़तों के लिये मैदाने जंग बनी हुई है। नुक़सान मुल्क का हो रहा है। मुल्क की मासूम अवाम हलाक हो रहे हैं। उनके मकानात, स्कूल, अस्पताल, इबादतगाहें मिस्मार हो रही हैं। पिछले एक हफ़्ते में रूस के बम वर्षक विमानों ने 120 फ़िज़ाई हमले किये और ग़ोता शहर को तबाह करके रख दिया। अभी तक पांच सौ तक हलाकतों की ख़बरें हैं जिनमें से डेढ़ सौ मासूम बच्चे भी हैं। फिलहाल जंगबन्दी का ड्रामा रचा गया है। अब इमदादी टीमें इलाक़े में जायेंगी। मरने वालों और जख़्मियों की सही तादाद उसी वक़्त मालूम होगी।

यहां सवाल यह है कि बश्शारुल असद को कब तक छूट मिलती रहेगी। क्या रूस उस वक़्त तक हमला करता रहेगा, जब तक बश्शारुल असद का एक भी मुख़ालिफ़ सुन्नी मुसलमान मुल्क में मौजूद है। क्या ईरान को सौ ख़ून माफ़ हैं। अमरीका जो सुपर पॉवर बना फिरता है, रूसी हमले रोकने में अभी तक नाकाम क्यों है?क्या उस नाकामी से ऐसा महसूस नहीं होता कि बश्शारुल असद के इक़्तिदार की बक़ा इस्राईल के हक़ में है। इसलिए अमरीका नहीं चाहता कि बश्शारुल असद के इक़्तिदार का ख़ात्मा हो। जंग की हक़ीक़ी सूरते हाल यह बतलाती है कि दोनों बड़ी ताक़तों का एक ही मक़सद है और वह यह कि सरज़मीने शाम में नसीरियों का इक़्तिदार सलामत रहे, सुन्नी मुसलमान या तो देश छोड़ दे या मार दिये जायें या कान दबाकर रहें, इसी में उनकी भलाई है। यह सूरते हाल तुर्की, सऊदी अरब, यमन, क़तर सबके लिये ख़तरे की घंटी है। शाम से निपट कर उनका रुख़ इन देशों की तरफ़ होगा जो ईरान की आंखों में ख़ार की तरह खटकते हैं, जिनसे इस्राईल के वुजूद को ख़तरा है। ईरान इन बड़ी ताक़तों के साथ मिलकर एक ऐसे अज़ीम शिया मुल्क का ख़्वाब देख रहा है जिसकी सरहदें ईरान से सऊदी अरब तक फैली हुई हों और उसमें कहीं कोई सुन्नी मुसलमान मौजूद न हो।

उम्मीद–ए–इलाही

मुहम्मद अरमुग़ान बदायूंनी नदवी

हज़रत अबूहुरैरा (रज़ि0) से रिवायत है कि नबी–ए–करीम (स0अ0) ने इरशाद फ़रमाया है कि मेरा बन्दा मुझसे जो गुमान रखता है मैं उसके मुताबिक़ हूं और वह जहां मुझे याद करे मैं उसके साथ हूं।

फ़ायदा: इन्सानी ज़िन्दगी उतार व चढ़ाव से भरी है। कभी इन्सान खुशी व प्रसन्नता के लम्हों में जीवन बसर करता है और कभी गम व तकलीफ़ों के पहाड़ भी उस पर टूटते हैं। इन हालात में अल्लाह की उम्मीद एक ऐसा जौहर है जिससे उसको तसल्ली मिलती है। दरअस्ल उम्मीद का मतलब यही है कि इन्सान अल्लाह तबारक व तआला के फ़ज़्ल व ईनाम का यक़ीन करके अपने दिल में एक ख़ुशी महसूस करे और उसकी अत्यधिक रहमत का अनुमान लगाते हुए अपने दिल की राहत का सामान मुहैया करे।

मायूसी उम्मीद का विलोम है और कभी–कभी इन्सान मुसीबतों के दलदल में फंसकर मायूसी का शिकार हो जाता है। जबकि यह ईमान के विपरीत कार्य है। लिहाज़ा ऐसे वक़्त में अल्लाह से रहमत की उम्मीद रखना इन्सान के लिये फ़र्ज़ है और अगर ऐसी सूरतेहाल न हो तो यह चीज़ नक़ल के दर्जे में हो जाती है। बशर्ते कि इन्सान के दिल में ख़ुदा की रहमत और उसके बेइन्तिहा फ़ज़्ल व करम का अक़ीदा मुस्तहकम (मज़बूत) हो।

कभी–कभी उम्मीद और आरज़ू में फ़र्क़ करना मुश्किल होता है और इन्सान ग़लतफ़हमी का शिकार हो जाता है। शरई नुक़्ता–ए–नज़र (दृष्टिकोण) से उम्मीद और आरज़ू में बड़ा फ़र्क़ है। उम्मीद का अर्थ यह है कि इन्सान अल्लाह के आदेशों पर अमल करे। उसकी वईदों से डरे और उसके बाद अल्लाह से अच्छे नतीजे की आशा रखे और आरज़ू का मतलब यह है कि इन्सान बिना कुछ किये अल्लाह की ज़ात से अच्छी उम्मीद रखे। हदीस शरीफ़ में ऐसी उम्मीद को तमन्ना और आरज़ू का नाम दिया गया है और उसको एक नामुनासिब काम बताया गया है। इरशाद–ए–नबवी (स0अ0) है: "समझदार शख़्स वह है जो अपने नफ़्स (इंद्रिय) की हिफ़ाज़त करे और मौत के बाद की ज़िन्दगी के लिये अमल करे और लापरवाह शख़्स वह है जो अपने मन को अपनी इच्छाओं के अधीन कर ले और फिर अल्लाह तबारक व तआला से उम्मीदें जोड़े रखे।

उम्मीद चाहे अल्लाह तआला की रहमत से जुड़ी हो या दुनिया की किसी भी चीज़ से, उसके लिये तीन बातों का होना ज़रूरी है। पहली बात यह कि जिससे उम्मीद जोड़ी जाये उससे मुहब्बत हो। दूसरा यह कि उसके फ़ौत (समाप्त) होने का आशंका व अंदेशा हो। तीसरा यह कि उसे पाने का हर संभव प्रयास हो।

अगर किसी उम्मीद मे यह तीन तत्व न हों तो उसको आरज़ू का नाम दिया जायेगा। लेकिन इन तत्वों से सुसज्जित कैफ़ियत उम्मीद कहलायेगी और उसका नतीजा यह होगा कि इन्सान अपनी मतलूब (वांछित) चीज़ के पाने की हर मुमकिन कोशिश करेगा। यही वहज है कि अल्लाह के जिन ख़ास बन्दों को उससे ग़ैर मामूली मुहब्बत होती है और उसकी रहमत से बहुत उम्मीदें जुड़ी होती हैं उसके नेक कामों की रफ़्तार बढ़ती ही जाती है और उम्मीद की कैफ़ियत उनकी ज़िन्दगी का हिस्सा बन जाती है। सहाबा किराम (रज़ि0) उसकी श्रेष्ठ मिसाल हैं। जो कि नेक कामों का पैकर थे। लेकिन फिर भी हर समय ख़ुदा से डरते रहते थे।

कभी–कभी नेक कामों का करना मन की इच्छा के विपरीत होता है और शैतानी वसवसों का हमला होता है। नेक मन की इच्छाएं भी ख़ैर को पाने में कारण बनती हैं और इन्सान ग़ाफ़िल लोगों से जल्द मुतास्सिर हो जाता है और ऐसी सूरत में आख़िरत की ज़िन्दगी का अज्र व सवाब और अल्लाह तआला के वादे निगाहों से ओझल हो जाते हैं। ज़ाहिर है ऐसी सूरत में नेक कामों की तरफ़ आकर्षित होना एक मुश्किल काम है और अल्लाह की इबादत से जुड़ना एक दुश्वार काम है।

लेकिन अल्लाह से उम्मीद ऐसा जौहर है जिसकी बुनियाद पर पिछली ज़िन्दगी से पलटना और आज्ञापालन व इबादत की ज़िन्दगी गुज़ारना बहुत ही आसान हो जाता है। इसीलिए अल्लाह तआला से उम्मीद को कुरआन मजीद में नेक कामों, खुशू व ख़ुज़ू और सीधी राह पर चलने का साधन बताया गया है और रिवायतों में बन्दे को यह शिक्षा दी गयी है कि वह अल्लाह तबारक व तआला से ख़ैर की उम्मीद रखे और उससे अच्छा गुमान करे। क्योंकि बन्दे का अपने रब के बारे में जैसा गुमान होता है अल्लाह तआला उसके साथ वैसा ही मामला करते हैं।

इस्लाम

पश्चिमी देशों में बढ़ती प्रसिद्धि

मुहम्मद नफ़ीस ख़ाँ नदवी

यूरोप जिसकी अपनी एक अलग सभ्यता है। जिसकी हुकूमत का कभी सूरज नहीं डूबता था। वह मानवता का ध्वजवाहक समझा जाता था। मानवता की भलाई की अनगिनत संस्थाएं वहां कार्यरत हैं। स्वास्थ्य केन्द्र हैं। शिक्षा व्यवस्था लगभग मुफ़्त है। बच्चों की परवरिश की ज़िम्मेदारी सरकार पर है। बेरोज़गारों को बेरोज़गारी भत्ता मिलता है, मनोरंजन के लिये नाइटक्लब हैं, वेश्यालय हैं, ख़ूबसूरत समन्दर के किनारे हैं, कोई चर्च जाये या कोई मंदिर जाये, किसी तरह की कोई बंदिश नहीं। दूसरे शब्दों में यूरोप के नागरिकों को सामाजिक, कल्याणकारी, राजनीतिक, सामाजिक हर प्रकार के सुविधाएं उपलब्ध हैं, जिसे देखकर दुनियावालों की निगाहें चकाचौंध हो जाती हैं। वहां बसना, वहां के लोगों से मेल–जोल बढ़ाना प्रगतिशील होने का मानक समझा जाता है तथा इसी प्रगतिशीलता ने यह सोच दी कि इस्लाम एक ऐसा धर्म है जो मनुष्य की प्रगति की राह का रोड़ा है। उसे अपनाकर कोई देश या क़ौम कभी उन्नति नहीं कर सकता। यह रूढ़िवादियों एंव आतंकवादियों का धर्म है। जिसका अनिवार्य परिणाम यह हुआ कि इस्लाम के बारे में लोगों के ज़हन ख़राब होने लगे तथा आम नागरिकों में यह सोच पैदा हो गयी कि इस्लाम आतंकवाद सिखाता है और जो जितना धार्मिक होगा वह उतना बड़ा आतंकवादी भी होगा! अतः यह संभव है कि हर मुसलमान आतंकवादी न हो लेकिन हर आतंकवादी मुसलमान ज़रूर माना जाता है।

यूरोप ने इस्लाम के ख़िलाफ़ यह विचार इसलिए दिये क्योंकि वह जानता है कि उसकी सारी उन्नति तथा मानवप्रेम के सारे दावे खोखले हैं। जिसे वह मानवता की उन्नति समझ रहा है वास्तव में वही मानवता की तबाही का आरम्भ बिन्दु है तथा इसका मुक़ाबला केवल इस्लाम की ईश्वरीय शिक्षाएं ही कर सकती हैं। जीवन के हर भाग में इस्लाम ने जो नियम दिये हैं और जीवन यापन के जो उसूल बताये हैं उनसे हटकर मनुष्य एक क़दम भी उन्नति नहीं कर सकता तथा मानव प्रेम की जो कुछ चमक यूरोप में दिखाई दे रही है वह वास्तव में इस्लामी शिक्षाओं की कुछ छींटे हैं जो यूरोप के दामन पर उस समय पड़ी थीं जब उसने मुसलमानों की उंगली पकड़कर ज्ञान के मार्ग पर चलने का प्रयास किया था।

मानवता की मांग तो यह थी कि यूरोप वाले उसे स्वीकार करते और मुसलमानों से ज्ञान व उन्नति के जो नुस्ख़े उन्होंने प्राप्त किये हैं, उसके उद्देश्य को प्राप्त करने का वे प्रयास करते तो आज उनकी उन्नति स्थायी और मज़बूत होती। लेकिन इस्लाम के ख़िलाफ़ भरी हुई नफ़रत और सलीबी जंगों में मिली हुई पराजय ने उन्हें स्वीकार करने के बजाय दुश्मनी पर आमादा कर दिया और उनकी सारी कोशिशें इस्लाम को बदनाम और आउट ऑफ़ डेट घोषित कर देने में ख़र्च होना शुरू हो गयीं। कभी दक़ियानूसी की नाम पर तो कभी आतंकवाद के नाम पर, तथा कभी रूढ़िवादिता के नाम पर, इस्लाम की पवित्र शिक्षाओं पर कीचड़ उछालने का प्रयास किया गया। विशेष रूप से 9/11 की घटना के बाद ऐसा महसूस होने लगा था कि पश्चिमी देशों में मुसलमानों का ज़िन्दा रहना मुश्किल हो जायेगा। डर व भय का ऐसा माहौल तैयार हुआ कि मुसलमान अपनी पहचान छिपाने लगे और एक बहुत बड़ी संख्या यह समझ बैठी कि अब मुसलमानों के पास यही चारा है कि वे यहां के पश्चिमी परिवेष में घुलमिल जायें। लेकिन कुछ ही समय में दुनिया ने देख लिया कि यह सारे अंदेशे ग़लत थे तथा इस्लाम की प्रसिद्धि पश्चिमी देशों में कहीं अधिक बढ़ गयी। वास्तविकताओं व घटनाओं ने यह स्वीकार करने पर मजबूर कर दिया कि यूरोप में सबसे तेज़ी से फैलने वाला धर्म इस्लाम है और फिर उसे अपनाकर लोक–परलोक दोनों जगह सफ़लता प्राप्त करने वालों की संख्या में बढ़ोत्तरी होती चली गयी। मानों इस्लाम पसंदी की एक लहर चल पड़ी है। और जो अब तक इस्लाम को मिटाने के प्रयास में लगे हुए थे वे स्वयं इस्लाम के रक्षक बनकर सामने आये। नीचे हम इसका एक विश्लेषण प्रस्तुत करते हैं:

न्यूयार्क से प्रकाशित होने वाली एक प्रसिद्ध पत्रिका "टाइम" ने एक रिपोर्ट प्रकाशित की है जिसके एक वाक्य से इस्लाम की हक़ीक़त और श्रेष्ठता साबित होती है। रिपोर्ट के अनुसार "यूरोप में नई मस्जिदों की संख्या में बढ़ोत्तरी हो रही है, वातावरण में पांच समय की अज़ान की आवाज़ गूंज रही है, रोम में तीन करोड़ डॉलर की लागत से मस्जिद का निर्माण हुआ, उसके लिये ज़मीन सरकार ने दी, फ़्रांस में एक हज़ार मस्जिदें हैं जबकि 1970ई. में

उनकी संख्या एक दर्जन के आसपास थी।'' पत्रिका के अनुसार तीन दशक पहले मुसलमान यूरोप में अजनबी थे और उन्हें संदेह की दृष्टि से देखा जाता था लेकिन मुसलमान अपनी राजनीतिक तथा सामाजिक हैसियत मनवाने में सफल हुए और आज इस्लामी साहित्य, कुरआन मजीद के अनुवाद की बिक्री में अत्यधिक बढ़ोत्तरी हो रही है जो पश्चिमी बुद्धिजीवियों तथा जनता के दिलों पर गहरा असर डाल रही है। बिट्रेन के एक शैक्षिक ट्रस्ट ''इस्लामिक फ़ाउन्डेशन'' के डायरेक्टर जनरल खुर्शीद अहमद कहते हैं कि इस्लामिक फ़ाउन्डेशन के विश्लेषण के अनुसार यूरोप में ढाई करोड़ मुसलमान आबाद हैं। उनमें एक करोड़ पन्द्रह लाख रूस में, 75 लाख पश्चिमी यूरोप में आबाद हैं, इस प्रकार इस्लाम यूरोप का दूसरा बड़ा धर्म है। बिट्रेन में रोज़ बरोज़ मुसलमानों की संख्या में बढ़ोत्तरी हो रही है। आंकड़ों के अनुसार बिट्रेन में मुसलमानों की संख्या बीस लाख है। छः सौ मस्जिदें हैं और चौदह सौ इस्लामी संस्थाएं काम कर रही हैं। मुसलमानों की संख्या और मस्जिदों के निर्माण में बड़ी तेज़ी से बढ़ोत्तरी हो रही है। इसका अनुमान आप केवल इस बात से लगे सकते हैं कि 1963 ई. में बिट्रेन में केवल 13 मस्जिदें थीं और उन मस्जिदों में केवल फ़ज्र, मग्रिब तथा इशा की नमाज़ होती थी। जबकि पूरे बिट्रेन में जुमा की नमाज़ का कोई विशेष चलन नहीं था। इसके केवल 30 बरस बाद 1993 ई. तक बिट्रेन में 575 मस्जिदों का निर्माण हो चुका है और उन मस्जिदों में जुमा की नमाज़ की भी व्यवस्था की जाती है।

फ़्रांस यूरोप का वह देश है जिसमें सबसे ज़्यादा मुसलमान रहते हैं। फ़्रांस में मुसलमानों की संख्या 60 लाख है। 1300 मस्जिदें व इस्लामिक सेन्टर हैं। 1600 इस्लामी संस्थाएं काम कर रही हैं। राष्ट्रीय स्तर पर मुसलमानों का अपना रेडियो चैनल है। मुसलमानों ने अपना पहला स्कूल ''मड़ग़ास्कर'' के पश्चिम में फ़्रांसीसी द्वीप ''रियूनियन'' में खोला। पहले कॉलिज का उद्घाटन 2001 में ''आबरूवेल्ज़'' में किया। अब कई शिक्षण संस्थाएं काम कर रही हैं। सरकारी दावे के अनुसार जिन फ़्रांसीसियों ने इस्लाम कुबूल किया उनकी संख्या तीस हज़ार है जबकि आक्सफ़ोर्ड यूनिवर्सिटी के मशहूर स्कालर अब्दुलकरीम मुराद ने स्वीकार किया है कि एक लाख फ़्रांसीसियों ने इस्लाम कुबूल किया है। इस प्रकार नवमुस्लिमों के हवाले से फ़्रांस यूरोप में पहले नम्बर पर आता है। सरकार का सोचना है कि आने वाले पंद्रह साल में फ़्रांस में मुसलमानों की संख्या साठ या अस्सी लाख हो जायेगी।

इटली और जर्मनी में भी मुसलमानों की संख्या संतोषजनक है। इटली में मुसलमानों की संख्या 10 लाख है। और 450 मस्जिदें व इस्लामिक सेन्टर हैं। उनमें अस्सी हज़ार पिछले कुछ सालों में मुसलमान हुए। जर्मनी में 40 लाख मुसलमान आबाद हैं। 1400 मस्जिदें व इस्लामिक सेन्टर हैं। आबादी में मुसलमानों का अनुपात 30.7 प्रतिशत है। 11 सितम्बर की घटना के बाद स्विटज़रलैंड में 6000 ईसाई मुसलमान हुए। माहिरीन का ख़्याल है कि सन् 2020 तक यूरोप की कुल आबादी में मुसलमानों की संख्या 10 प्रतिशत हो जायेगी। अमरीका के एक आज़ाद खोजी संस्था के अनुसार सन् 2025 तक ज़मीन पर रहने वाले लोगों में एक तिहाई मुसलमान होंगे। सान्डया यूनिवर्सिटी के एक खोजी जान वेक्स के अनुसार सन् 2020 तक दुनिया के हर चार लोगों में से एक मुसलमान होगा। विख्यात पोप माजूलेनी के अनुसार भविष्य इस्लाम का है। अमरीकी पत्रिका के अनुसार सन् 2025 तक मुसलमान पूरी दुनिया का 35.5 प्रतिशत होंगे। जबकि ईसाई 20.2 प्रतिशत होंगे। 2000 ईसवी में हिन्दु 13.4 प्रतिशत थे, जबकि सन् 2025 ईसवी तक 5.7 प्रतिशत होंगे। सन् 2000 में बौद्ध 5.9 प्रतिशत थे जबकि सन् 2025 तक 5.7 प्रतिशत होंगे। 2000 ईसवी में यहूदी 3.7 प्रतिशत थे जबकि सन् 2025 तक 2.5 प्रतिशत होंगे। जबकि दूसरे धर्मों में 7.7 प्रतिशत होंगे। पत्रिका ने माना है कि यूरोप में इस्लाम के फैलाव का अनुपात दूसरे धर्मों से कहीं अधिक है। इन वास्तविकताओं ने कट्टर ईसाईयों व ओरियन्टेस्टिों की नींदे उड़ा दी हैं। यूरोपीय देशों में कल्याणकारी कार्यों व मानवता की भलाई के जितने प्रयास हो रहे हैं और इस्लाम के विरुद्ध जो प्रोपगन्डा किया जा रहा उनका सबका उद्देश्य यही है कि ईसाईयत का बढ़ावा मिले और इस्लाम की जगह पर ईसाईयत ही अन्तर्राष्ट्रीय धर्म स्वीकार किया जाये। लेकिन इस्लाम की तरफ़ बढ़ते हुए पश्चिमी नागरिकों के रूझान से यह बात खुलकर सामने आ चुकी है कि इस्लामी एक ईश्वरीय धर्म है और उसकी शिक्षाएं कभी न समाप्त होने वाली है। दुनिया की किसी तकनीक व ताक़त से उसे रोका नहीं जा सकता। और आज नहीं तो कल दुनिया इस्लाम के झंडे के तले जमा होगी। और अपनी वास्तविक सफलता को प्राप्त करेगी।

जबान की नेकियां

अच्छी बात का हुक्म देना बुरी बात से रोकना

ज़बान की ख़ूबियों में एक बड़ी और क़ाबिले रश्क ख़ूबी यह भी है कि नेक और अच्छी बात का हुक्म दे यानि 'अम्र बिल मारूफ़' करे और बुरी बात से रोके, यानि 'नही अनिल मुनकर' करे। यह मुबारक काम अम्बिया–ए–किराम और असहाब–ए–किराम रज़ि० का है। और जो काम अम्बिया–ए–किराम या असहाब–ए–किराम रज़ि० का मश्ग़ला–ए–ज़िन्दगी हो। इस काम की बरकत का क्या कहना। सारे अम्बिया किराम ने अपनी–अपनी क़ौम को नेक ज़िन्दगी गुज़ारने का हुक्म दिया और इस राह में बड़ी तकलीफ़ उठायीं, गालियां सुनीं, पत्थर खाये, ज़ख़्मी हुए, और उनका बायकाट किया गया। हुज़ूर अक़दस स०अ० ने कोहे सफ़ा पर चढ़कर फ़रमाया, लोगो! ला इलाहा इल्लल्लाह कहो, कामयाब होगे। फिर आप स०अ० ताएफ़ तशरीफ़ ले गये, और बड़े–बड़े सरदारों को इस्लाम व ईमान की दावत दी। उन सरदारों ने आपको इतना सताया, और नवजवानों से पत्थर फेकवाये, कि आप स०अ० के पैर मुबारक ज़ख़्मी हो गये और इतने लहूलुहान हो गये कि आप स०अ० थककर बैठ गये और अल्लाह पाक से ऐसी पुरदर्द और असरअंगेज़ दुआ मांगी कि हज़रत जिब्राईल तशरीफ़ ले आये और उस नालायक़ और मूज़ी क़ौम को सज़ा देने की इजाज़त मांगी, मगर आप स०अ० चूंकि रहमतुल्लिलआलमीन थे। इसलिए न तो आप स०अ० ने बद्दुआ की, न सज़ा देने को कुबूल फ़रमाया, निहायत मुलायम और रहमत व शफ़क़त से पुर अल्फ़ाज़ इरशाद फ़रमाये लेकिन दावत इलल्लाह और अम्र बिल मारूफ़ यानि अच्छी बात को कहना न छोड़ा। वह ज़बान बड़ी मुबारक है जो अच्छी बात का कहना न छोड़े और अच्छे काम के करने का हुक्म करती रहे, क़ुरआन शरीफ़ में है: ''उससे अच्छी बात कहने वाला कौन होगा जो अल्लाह की तरफ़ बुलाये और नेक काम करे और कहे कि मैं मुसलमानों में से हूं।''

दूसरी जगह इरशाद है: ''तुम एक बेहतरीन उम्मत हो जो पैदा की गयी है लोगों के लिये, हुक्म देते हो अच्छी बात का और रोकते हो बुराई से और अल्लाह पर ईमान रखते हो।''

एक और जगह हुज़ूर–ए–अक़दस स०अ० से इरशाद है: ''और अपने घरवालों को नमाज़ का हुक्म दीजिए।''

दावत के आदाब

अच्छी बात का हुक्म देने और बुराई से रोकने का काम कई तरीक़ों से किया जा सकता है। निजी मुलाक़ातों में, इज्तिमाई तौर पर तक़रीरों के ज़रिये, बातों–बातों में, छोटों से, बराबर वालों से, बड़ों से, उन सब तरीक़ों के अलग–अलग उसूल व आदाब हैं। छोटों से मुहब्बत व शफ़क़त से कहना मुअस्सिर भी है और मुफ़ीद भी। बराबर वालों से इख़्लास और प्यार से अच्छी बातों की तलक़ीन करना आदाबे कलाम में से है। बड़ों से निहायत अदब व इहतिराम का मामला करना और इस तरह से बात करना जिससे बड़ों की बड़ाई और अज़मत में फ़र्क़ न आये, ज़बान की हज़ार ख़ूबियों में से एक ख़ूबी है। निजी मुलाक़ातों में बात करने में अख़्लाक़ व मुन्कसर मिज़ाजी तासीर का दर्जा रखती है। तक़रीर करने में इसका ख़्याल रखना बहुत ज़रूरी है कि बात जची–तुली हो और लफ़्फ़ाज़ी से ख़ाली हो। न इतनी लम्बी हो कि सुनने वाले उकता जायें, न इतनी मुख़्तसर हो कि मतलब भी न अदा हो सके। तेज़ और शोला बयानी तक़रीर की तासीर को कम कर देती है। नर्म ख़ोई तासीर में अक्सीर का हुक्म रखती है।

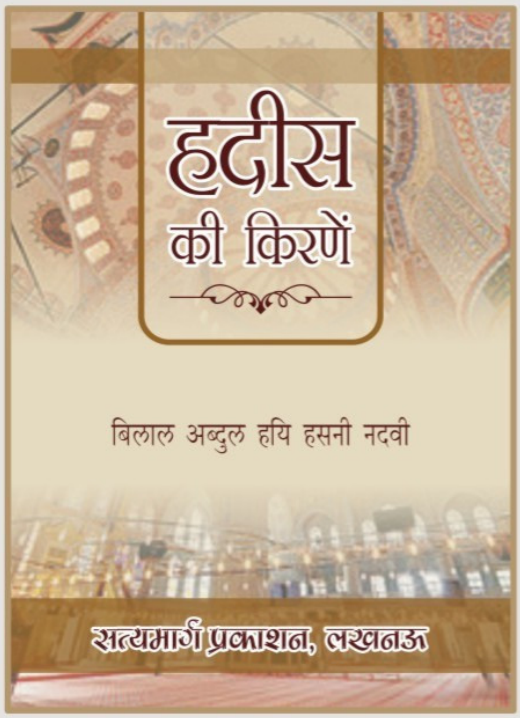
मौलाना मुहम्मद सानी हसनी रह०

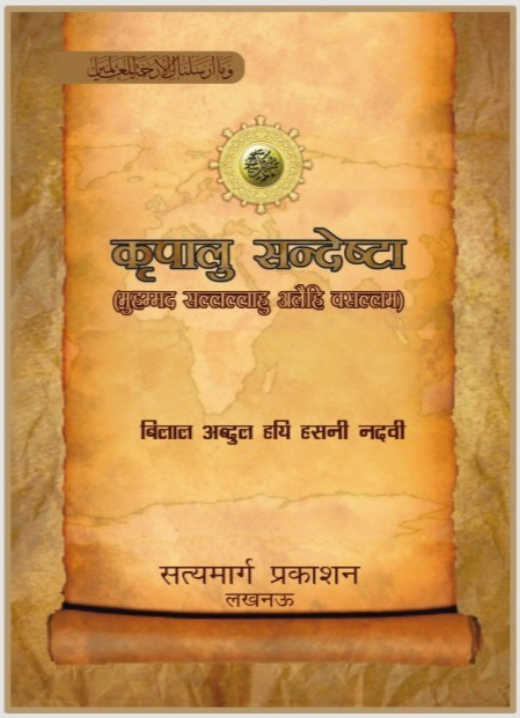
R.N.I. No.
UPHIN/2009/30527

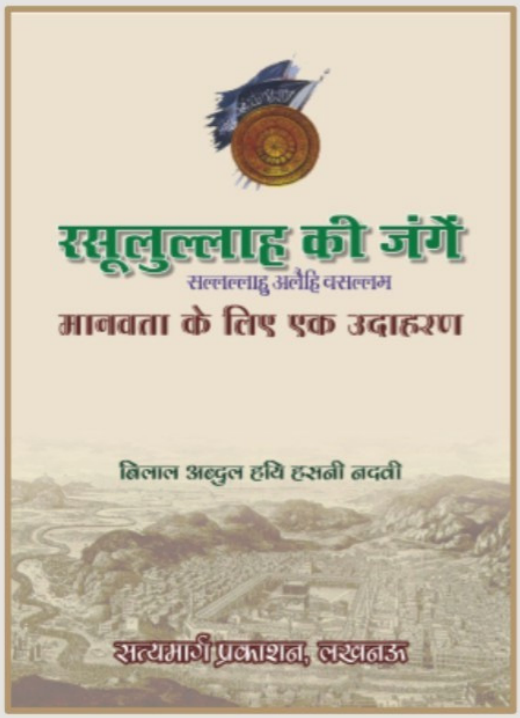
Monthly
ARAFAT KIRAN
Raebareli

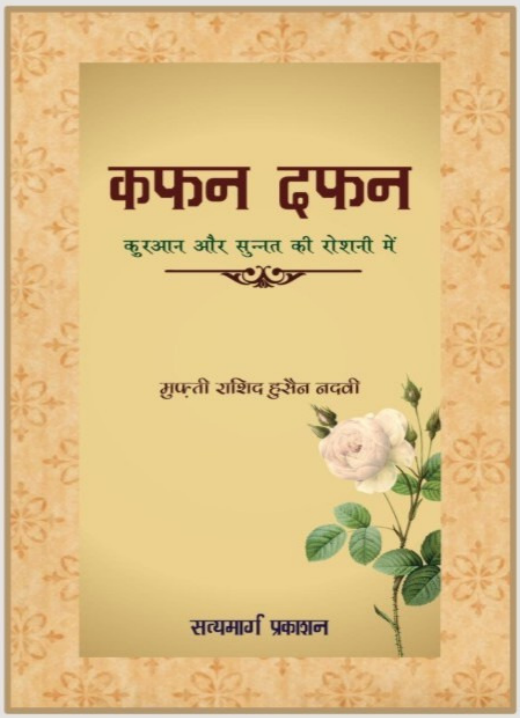
Postal Reg. No.
RBL/NP -19

Issue: 04 APRIL 2018 VOLUME: 10









Editor: Bilal Abdul Hai Hasani Nadwi
MARKAZUL IMAM ABIL HASAN AL-NADWI
Dare Arafat, Takiya Kalan, Raebareli, U.P.
Mobile:9565271812
E-Mail: markazulimam@gmail.com
www.abulhasanalinadwi.org

Printed & Published by: Mohammad Hasan Nadwi
On Behalf of: Markazul Imam Abil Hasan Al-Nadwi
Printed at S.A. Offset Printers, Masjid ke peeche,Phatak
Abdullah Khan, Sabzi Mandi, Station Road, Raebareli, U.P.